श्रीमान् मुनिश्री हंसवीजयजी महाराज.

जन्म. १९१४ ना
दिवासाका दिन.

दीक्षा १९३५
महा वदी ११

SURYA PRAKASH P.PRESS AHMEDABAD.

श्री हंसविजयजी जैन फ्रीलायब्रेरी ग्रंथमाला पुष्प ११ वां

ॐ

मांडवगढकामन्त्री-

अथवा

पेथडकुमारका परिचय.

संयोजकः

न्यायांभोनिधि जैनाचार्य श्रीमद्विजयानन्दसूरीश्वरशिष्य

पंडित वर्य्य श्री लक्ष्मीविजयजीमहाराजके शिष्य

श्रीमान् हंसविजयजी महाराज.

संस्कारकः

वकील झमकलालजी रातडीया.

प्रकाशकः

श्री हंसविजयजी जैन फ्री लायब्रेरी बडौदा.

प्रथमावृत्ति	वीर संवत	विक्रम सं. १९७९
प्रत १०००	२४४९	मूल्य ४ आने

अमदावाद धी फीनीक्ष प्रिन्टिंग वर्क्समां

शा. मोहनलाल चीमनलाले छाप्युं.

आभार.

इस पुस्तकके प्रसिद्ध करनेमें जिन सधर्मि भाईयोंने अपना पुण्योपार्जित लक्ष्म.का सदुपयोग किया है उनका उपकार माने बिना हम नहीं रह सकते. अमरावती निवासी श्रीयुत फतेचन्दजी फलोधिया, कि जिन्होंने अमरावतीमें श्री जिन मन्दिर बनवाकर बडे समारोहके साथ प्रतिष्ठा महोत्सव किया, और वहांपर यात्रालु लोगोंके लिए एक धर्मशाला बनवाई है और उद्यापन करके अपना जीवन सफल किया और कर रहे हैं उन श्रीमान्की धर्मपत्नि श्रीमती अमृतबाईने २५०) रुपये दिये हैं तथा जयसिंहभाई उगरचन्द दलाल अमदाबादवाले जिन्होंने उद्यापनादि में अच्छा धन खर्च किया और कर रहे हैं उन्होंने २०१) रुपये दिये हैं. तथा सूरत निवासी झवेरी भूरियाभाई जीवनचन्दने २५) रुपये तथा कालियावाडीवाले नेमचन्द भाई फकीरचन्दने २५) रुपये दिये हैं इस लिए हम उपरोक्त सद्ग्रहस्थोंका अंतःकरण पूर्वक उपकार मानते हैं कि जिन्होंने परमपूज्य श्रीमान् हंसविजयजी महाराजके बनाये हुए इस धर्म परिपूर्ण ऐतिहासिक पुस्तकके प्रगट करनेमें मदद दी है।

श्री हंसविजयजी जैन

फ्री लायब्रेरी के सेक्रेटरी

बडौदा (स्टेट)

श्रीयुत बाबू लक्ष्मीचन्दर्जी कर्णावत.

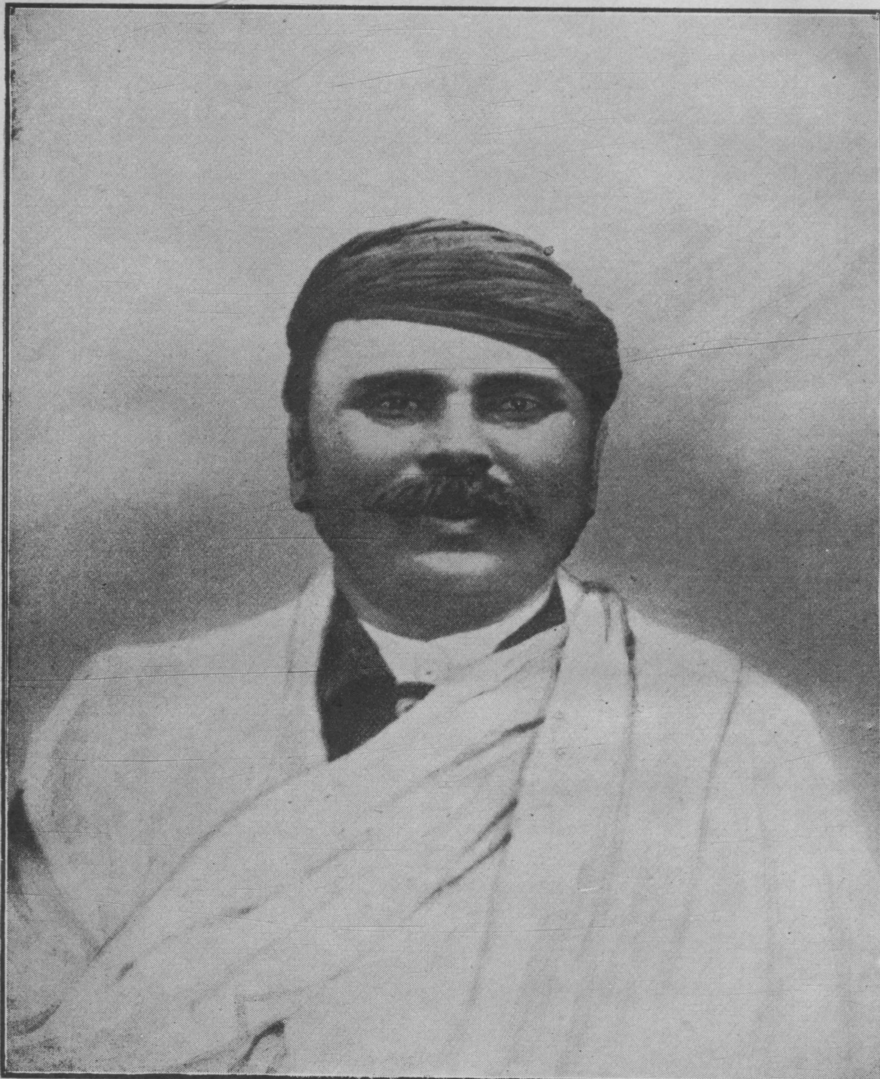

जन्म स. १९२४ श्रावण वद ३.

अवसान सं. १९७३ वैशाख वद ३.

श्री जिनेंद्राय नमः

(अर्पण पत्रिका)

श्रीमान् स्वर्गीय श्रावकवर्य्यं बाबुसाहेब लक्ष्मीचंदजी कर्णावत.

आपने इस संसारमें उच्चकुल व सर्वोत्तम धर्म पाकर श्रीसिद्धाचलजी तथा श्रीसम्मेन शिखरजी तथा श्रीपावापुरीजी वगेरे तीर्थयात्राके साथ देवगुरुस्वधर्मीकी भक्ति करके अपने आत्माका कल्याणकिया और अपने सुपुत्र श्रीयुत हनुमानसिंहजी कलकत्ता निवासीको संसारमें छोडकर स्वर्ग सिधार गये

श्रीमान् तुम्हारे पुत्रादि परीवारने भी श्री सिद्धाचलजी उपर सेठ मोतिशाहकी टुंकमें देहरी लेकर श्रीसुपार्श्वनाथजी आदि परमात्माकी ९ मूर्तियां स्थापनकी जिनका स्तवन निचे रोशनकियाहै इसी तरह देवगुरु ज्ञानकी भक्ति तनमन धनसें करके अपने द्रव्यका सदुपयोग कियाहै और कर रहे हैं तथा हमारी संस्थाके प्रथम वर्गके मेंबर होकर सहायता दीहै अतएव इस पुस्तक की आदिमें आपका फाटु देकर यह ग्रन्थ आपको सादर समर्पण कर आपके आत्माको अखंड शांति प्राप्त हो यह चाहते हैं.

आपका सहधर्मी बन्धु

प्रकाशक.

उपर दर्शाया हुवा श्री सिद्धाचलजीका स्तवन

काफी

नेमि निरंजन ध्यावोरे वनमें तपकीनो
यह चाल.

स्वामीसुपार्श्वजिणंदारे, दिये परम आनंदा
ए आंकणी.

शांत वदन शीतलता अपें ।
जैसे गगनमें चंदारे ॥ दिये० (१)
सिद्धाचलपर समवसरणमें ।
सेवे सुरनर इंदारे ॥ दिये० (२)
तैसे तुमारी सेवा कारण ।
मूर्त्ति ठवे सानंदारे ॥ दिये० (३)
मोति शाहकी टुंके मनोहर ।
काटे कर्मका कंदारे ॥ दिये० (४)
कलकताके निवासी कर्णावत ।
हरवा भवोभव फंदारे ॥ दिये० (५)
लक्ष्मीचंदजी सुत हरमानसिंह ।
हर्ष धरीअमंदारे ॥ दिये० (६)
हंस कहे वहां पांच प्रभुकी ।
प्रतिमा पूजो भवि बंदारे ॥ दिये० (७)

(सूचना)

जिस महान नररत्न का परिचय इस पुस्तक में कराया गया है उसके जीवन चरित्र की तुलना करके और उसका अनुकरण करके मनुष्य अपने जन्मको सफल कर सकता है। पेथडकुमारने अपनी दरिद्रावस्था में किस प्रकार से धैर्य रक्खा और अपनी उन्नतावस्था में अपने द्रव्य को किस तरह सन्मार्ग में खर्च किया और धर्म को किस प्रकार सेवाकी यह सब बातें पाठकोंको इस छोटोसी पुस्तक से अच्छी तरह मालुम हो जायेंगी। सुकृतसागर काव्य में पेथड कुमारका चरित्र वर्णन किया गया है उसपर से भव्य जीवोंके हितार्थ संक्षेप में यह पुस्तक परमपुज्य शान्त मूर्ति हंससमनिर्मल प्रातःस्मरणीय श्रीमन्मुनि श्री हंसविजयजी महाराज साहबने लिखो है अतएव हम आपका अन्तःकरण पूर्वक उपकार मानते हैं।

प्रस्तुत वृतान्त ईस्वी सन् १२०० के साल के लगभग अर्थात् १३ वीं सदी में बना है*। इसके साथ यह ऐतिहासिक वृत्तान्त अपनी जैन समाज को भी उपयोगी होना सम्भव मालुम होता है। उस समय

* "मांडवगढनो मंत्री पेथडकुमार" से उद्धृत
—प्रकाशक.

दिल्ली के तख्त पर खिलजी वश का अलाउद्दीन खूनी बादशाह राज करता था जिसने इस्वीसन् १२९७ में कर्णघेला के पास से गुजरात सर किया वही अलाउदीन बादशाह अपने वृत्तान्त के समय में होगा ऐसे आसपासके संयोग देखने और इतिहास का अवलोकन करने से मालुम होता है। और अपने इस वृत्तान्तमेंभी एक जगह ऐसा सुबूत मिलता है- कि अलाउदीनखिलजी से सन्मानित पूर्ण नामक श्रावक जूनागढ आया हुवा था और अपने वृत्तान्त का नायक पेथडकुमार भी वहां गया था। वहां उनका समागम और वादविवाद हुवाथा इस पर से भी अ- नुमान हो सकता है कि वही अलाउदीन बादशाह होना चाहिये। ऐसेही गुजरात की गद्दीपरभी भीम बाणावली के वंश परम्परा से अनुक्रम से कर्ण, सिद्धराज, कुमारपाल, भोलाभीम वगेरे हुवे। उस भोले भीमके वक्त में दिल्ली की गद्दी पर पृथ्वीराज चौहान था उसके पास से शाहबुदीनगौरीने राज्य ले लिया। यानि दिल्ली की गद्दी शाहबुदीन के हाथ मे आई, उसके पास से तुगलकवंशमें और वहां से खिलजी वंश में गई। अपने वृत्तान्त के समय में खिलजी वंश का अलाउदीन बादशाह था और भोले भीम से अनुक्रम से कालान्तर में गुजरात की गद्दी

पर कर्णवाघेला हुवा जिसके पास से अलाउद्दीन बादशाहने गुजरातका कब्जा लिया और एक वक्त का राना जंगल में भटक भटक कर मर गया। जिस अर्सेमें दिल्ली और गुजरात के भाग्य चक्रका चमत्कार हो रहाथा उस वक्त मालवा प्रान्तान्तर्गत मांडवगढ नगर बडा समृद्धिशाली था और उस वक्त वहां परमार वंशीय मालवे का प्रख्यात राणा जयसिंहदेव राज्य करता था।

उस वक्त माण्डवगढको स्थिति मध्यान्हकाल जैसी थी परन्तु दैव की गति विचित्र है। काल की गति भिन्न है इससे वह भी काल के चक्कर में पड गया और उसकी बहुतसी निशानियें नष्ट हो गई। इस वक्त वहां एक छोटा सा गांव है उस वक्तका मनोहर किला पृथ्वी ने अपनी गोद में छिपा लिया है। वर्त्तमान में गॉव के प्रवेशद्वार पर एक पत्थर का तोरण और पृथक २ स्थानों पर प्राचीन मंदिर व खंडरों के चिन्ह दिखाई देते हैं। वहां पर वर्त्तमान में श्री शान्तिनाथ भगवानका जिनालय है और उसमें स्थित श्रीसुपार्श्वनाथ भगवानकी प्रतिमा महासती सीता के शील के प्रभावसे वज्रभूत हो गई थी जो इस वक्त मौजूद मानी जाति है। बहुतसे जैन लोग वहां यात्रा करने के लिये जाते हैं तब वास्तव में प्राचीन छटा का उनको प्रत्यक्ष भान होता है।

ईस्वीसन् १२०० की सदी में पेथडकुमार का जीवन जगत् को उपयोगी हुवा है उसके गुरु उस वक्त सुप्रसिद्ध श्रीमद् धर्मघोष सूरीश्वर थे उनके लगभग २०० वरस के पीछे उनका चरित्र लिक्खा गया हो ऐसा मालुम होता है क्यों कि उनके पाट परम्परा पर श्री सौमसुन्दर आचार्य हुवे जो लगभग श्रीमद् देव सुन्दरसूरि और ज्ञान सागरसूरि के समय में हुवे हों ऐसा मालुम पडता है। उनके पीछे उनके पटधर मुनि सुन्दरसूरि हुवे और उनके पटधर रत्नसागरसूरि हुवे उनके शिष्य श्री नन्दी रत्नगणी और उनके शिष्य श्रीरत्न मंडन गणी हुवे जिन्होंने सुकृत सागर काव्य उपकारार्थ बनाया। वे प्रायः रत्नशेखर सूरिके वक्त में हुवे हों ऐसा विदित होता है। रत्नशेखर सूरि का जन्म संवत १४५२ में हुवा, १४६३ में दीक्षा ली, १४८३ में पण्डित हुवे, १४९३ में उपाध्याय हुवे, १५०२ में आचार्य पदवी प्राप्त की और १५१७ में स्वर्गस्थ हुवे। उस समय में यानि लगभग २०० बरस में यह वृत्तान्त लिक्खा गया हो ऐसा अनुमान होता है।

आशा है कि इस वृत्तान्त को पढकर पाठकगण उचित शिक्षा ग्रहण करेंगे।

प्रस्तावना.

वन्दे वीरमानन्दम् ।

स्वैर्द्रव्यैर्जिनमन्दिराणि रचयत्यभ्यर्चयत्यर्हत-
स्त्रिर्भक्त्या यतिनां तनोत्युपचयं वस्त्रान्नपानादिभिः ।
धत्ते पुस्तकलेखनोद्यममुपष्टभ्नाति साधर्मिकान्,
दीनाभ्युद्धरणं करोति कलयत्येवं सुपुण्यार्जनम् ॥१॥

इस अगाध संसार सागरमें अनेक जीवात्मा एक भवावतारी हैं, अन्य दो भवों में संसार पार होने वाले हैं, कीतनेही जीव तीसरे भवमें अनादि कालकी डगमगाती हुई अपनी नय्याको पार लगानेका शाही परवाना ले चुके हैं । एवं कोई संख्य जन्मों में और कई असंख्य जन्मों में मोक्ष पद पाने के अधिकारी बन चुके हैं । इतनी शीघ्रता और आसानीसे जीवात्मा धम सामग्रीको सेवनासे हो इस अपार संसारसे पार हो सकता है । धर्मकी सामग्री में कतिपय अंग वह हैं जिनका कि नामनिर्देश ऊपर किया गया है ।

मतलब कि कइ भव्यात्मा जिनमंदिरोंके बनवानेसे तथा उनका उद्धार कराने से संसार पारगामी हुए हैं, अर्थात् सुलभ बोधि होकर उत्तरोत्तर उन्नत

दशाको प्राप्त होते हुए मोक्षाधिकारी हुए हैं। यथा संप्रतिनरेश।

कइ पुण्यात्मा त्रिकाल जिनपूजन करके निज मनको शुभयोगमें स्थिर कर संसारसे उत्तीर्ण हो गये है यथा नागकेतु।

अनेक उच्चात्मा सद्गुरुओंकी सेवासे ही स्वकार्य साधक हो गये हैं। जैसे कि, परदेशी राजा और चौलुक्य चूडामणि कुमारपाल भूपाल।

अनेकोंही उदाराशय महानुभाव श्रीजिनागमोंके लेखनादि क्रियाद्वारा उद्धार करने करानेसे जगत्में प्रसिद्धिके पात्र और जन्मांतरमें सद्गतिके भाजन हो गये हैं। जैसेकि, भगवान श्री देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण और स्कंदिलाचार्य प्रभृति साधुमहोदय तथा गृहस्थोंमें संग्रामसिंह-सोनी आदि सज्जनवृंद। साधर्मिक पुण्यात्माओंके बहुमानसे स्वयं बहुमानके पात्र बनने वाले उच्चात्मा तो श्री जिनशासनमें गणनातीत हो चुके हैं, जिनमें श्री संभवनाथ स्वामी तीसरे तीर्थंकर भगवानका उदार चरित विशेष उल्लेखनीय एवं मननीय और अनुकरणीय हैं?

आपने पूर्व भवमें अति दुर्भिक्षके समय साधर्मिक लोगोंका पालन निजात्माके समान किया था, जिसके प्रभावसे आप अगले भवमें देवर्द्धिका उपभोग

कर इस अवसर्पिणीमें इसी भरतक्षेत्रमें वर्त्तमान चतुर्विंशतिके तीसरे तीर्थंकर त्रिलोकी नाथ हुये।

दीनात्माओंके उद्धारकोमें तो अन्य उदाहरणोंको आवश्यकता नहीं मालूम देती है। भगवान् तीर्थंकर देवका हीदृष्टांत पर्याप्त हैं। पशुओंके आक्रंदको सुनकर उनको दया विचार उन दीन दुःखी पशुओंको मुक्त कराकर विरक्त हुए हुए विवाहके रथको तुरत पीछे मोडलेने वाले बालब्रह्मचारी प्रभु श्री नेमिनाथ कुमारकी कुमार कथाको, एक विषधर–सर्पको घोर पापसे बचानेके लिये उसके दृष्टि विष और दंष्ट्रा विष–डंकको सहन करके पंदरह दिन तक भूखे प्यासे एक ही स्थानमें उस आत्माके उद्धारार्थ ध्यानस्थ खडे रहने वले चरम तीर्थंकर प्रभु श्री वीर परमात्माकी वीरचर्याको, मेघरथ राजाके भवमें कबूतरकी रक्षाकी खातर शरणागत वत्सल क्षात्र धर्मके लिये जान कुरबान करने वाले सोलमे तीर्थंकर श्री शांतिनाथ प्रभुके धैर्यको, एवं यज्ञमें हवन किये जाने वाले एक घोडेको बचानेके लिये और उस गिरी हुई आत्माके उद्धारकी खातर एकदम साठ योजनका विहार करके आने वाले वीसमे भगवान् श्री मुनिसुव्रतस्वामी तीर्थंकरके उस परोपकार रूप सुव्रतको कौन भूल सकता है?।

मांडवगढ और पेथडशाह

कवि कालिदासने एकठिकाने लिखा है कि—

यात्येकतोऽस्तशिखरं पतिरोषधीना—
माविष्कृतोऽरुणपुरस्सर एकतोऽर्कः ।
तेजोद्वयस्य युगपद्व्यसनोदयाभ्यां,
लोको नियम्यत इवात्मदशान्तरेषु ॥१॥

वह १२ योजन लंबी और ९ योजन चौडी अयोध्या जिसमें भरत और सगरजैसे षट् खंडाधिपति, हरिश्चन्द्र, और दधीचि जैसे सत्यसंध, राम लक्ष्मण जैसे प्रजापालक नरपति हो गये आज किस हालतमें है ? जहां शांतिनाथ, कुंथुनाथ, और अरनाथ जैसे तीर्थंकर सम्राटोंके जन्माभिषेकादि कल्याणकोंके समय देव देवेंद्रोंका आगमन हुआथा, आज वह हस्तिनापुर किस गिनतीमें है ? जिसको आबाद करके चित्रांगद राजाने आदेश किया था कि, यहां करोडपतिके सिवाय औरकिसीको स्थान न मिलेगा ? आखीर करोडपतियोंसे तमाम जगह भरजानेसे लक्षाधिपतियोंके लिये तलहट्टी पर हजारों मकान

बनाने पडे थे आज वह चित्रकूट (चितौड) नाम और कथा शेषके सिवाय और किस बातका अस्तित्व रखता है ?

और सुनिये। राजग्रही कि जहां श्रेणिक राजा के श्रेणिबद्ध हाथी झूला करते थे, जहां धन्ना–शालिभद्र जैसे दिव्यभोगी श्रेष्ठिनंदन रहते थे। नालंदा पाडा कि जहां–भगवान् ज्ञातनंदन श्रीमहावीर प्रभुके चौदह चौमासे हुये थे, और कुछ अरसेके बाद जहां बौद्ध धर्मका महाविद्यालय ऐसा विशाल बना था कि जिसमें चीन तकके विद्यार्थी पढनेको आया करते थे। आज वह नगरी देखनेको भी कहीं है ? हां खंडहर तो पडे हैं।

सारनाथ जो स्थान बुद्धदेवके प्रथम उपदेशके कारण संसार भरमें प्रसिद्ध था, अशोक जैसे महाराजाओंने जहां गगनचुंबी मंदिर बनवाये थे, आज उस स्थानमें दिनमें भी भय लगता है।

काश्मीर देशके प्रख्यात शहर श्रीनगरके निकट डल नदीके किनारे जहांगीर बादशाहने जो महल बनवाया था उसमें काश्मीरकी कुल आमदनी खर्च की जाती थी। इसके इलावा एक करोड दस लाख रुपया

बादशाही खजानेसे भी खर्च किया गया था । इस महलके आसपास नसीम, नशात और शालामार नामके तीन बागीचे लगाये गये थे । जिन्हें देखकर मनुष्य उन्हें स्वर्ग और सुमेरु समझ लेते थे । जिनमें बादशाह नूरेजहां के प्रेममें मशगूल होकर दोनों जहांनोंसे बेखबर फिरा करताथा । आज उस महलका नामोनिशान नहीं रहा है, बागीचोंमेंसे केवल एक बागमें कुछ साधारणसे पेड (वृक्ष खडे हैं ।

इधर बम्बइ कलकत्ता जैसे भारतके सुप्रसिद्ध शहर कि, जहां कुछ समय पहले थोडे थोडे झोंपडे पडे थे आज उनमें लाखों मनुष्योंकी बस्ती है । इससे सिद्ध है कि, आज जिसका उदय है कालांतरमें उसका अस्त है और आज जो सूखा पडा है कालांतरमें वहखिलेगा । परिवर्त्तन रूपही तो संसार है । किसी कविने ठीकही कहा है:-' नीचैर्गच्छ त्युपरि च दशा चक्रनेमिक्रमेण."

इसी प्रकार आज जो मांडवगढ वीरान उजाडसा पडा है, वही मांडवगढ इस दशामें था कि, जहां के रहने वाले सेठ-भैंसाशाहनें करोडों रुपये खर्चके गुजरात देशके व्यापारियोंको नीचा दिखाया था ? यह कथा जैनसंप्रदाय शिक्षा आदि भाषाग्रंथोंमेंभी

लिखी गई है। प्रायः बहुतसे जैन लोग इसबातसे खूब परिचित हैं।

वही मांडवगढ है कि, जहां के रहने वाले संग्रामसिंह—सोनीनें अपने धर्माचार्य श्री ज्ञानसागरसूरिके प्रवेश महोत्सवमें ७२ लाख द्रव्य खर्च किया था। ६३ हजार अशर्फियां—सोनामोहरों से ज्ञान पूजन कर श्रीगुरुमुखसें पंचमांग—श्रीभगवतीसूत्रका व्याख्यान सुना था।

प्रसंग वश संग्रामसिंहकी उदारताका और सदाचारताका कुछ परिचय दिया जाना अनुचित नहीं कहा जायगा।

एक दिनका जिकर है कि, संग्रामसिंहने गुरुमहाराजके चरणोंमें प्रार्थना की कि, प्रभो ! आप जैसे गीतार्थ गुरुओंका योग बडे पुण्यसे मिलता है इसलिये आप कृपा करें, व्याख्यानमें प्रभावशाली श्री भगवतीसूत्र सुनावें, ताकि आपसे सद्गुरुका मिला योग सफल होवे। गुरुमहाराजने समयानुसार योग्य श्रोता समाजको देख शुभ मुहूर्त्तमें श्री भगवतीसूत्रका व्याख्यान शुरू कर दिया। सोनीजीको सुननेमें इतना प्रेम और उत्साह आया कि, गुरुमहाराजके सुनानेमें श्री भगवतीसूत्रके पाठमें जब जब गोयमा यह पद

आता था तब तब सोनीजी एक एक सोना मोहर ज्ञान पूजामें भेट करते थे अर्थात् ज्ञानपर चढाते थे। श्रीभगवतीसूत्रमें गोयमा शब्दका प्रसंग ३६ हजार वार आता हे उसमुजिब ३६ सहस्र मोहरें तो खुद सोनीजोने ज्ञान पर चढाई। प्रति प्रश्न इसी प्रकार आधी आधी मोहरके हिसाबसे १८ हजार मोहरें सोनीजीकी धर्म पत्नीने चढाई और चतुर्थांशके हिसावसे ९ हजार पुत्रवधूने चढाई। एवं कुल ६३ हजार मोहरें समझ लेनी। कहते हैं कि इस रकममें एक लाख पैंतालीस हजार मोहरें और मिलाकर इन कुल २ लाख ८ हजार मोहरें ज्ञान–पुस्तकोंके लिखवानेमें खर्च करदीं। संग्रामसोनीके लिखवाये सुनहरी चित्राम और सुनहरी ही अक्षरोंके कल्पसूत्र मूल–जोकि बारां सौ के नामसे जैन समाजमें प्रसिद्ध है, प्रायः बहुतसे जैन भंडारोंमें उपलब्ध होते हैं।

उदारताके साथ आप सदाचारी–ब्रह्मचारी–स्वस्त्री संतोषीभी परले दर्जेके थे। एक वक्तका जिकर है–

बगीचेकी सैर करते हुए बादशाहने तमाम आम फले हुए देखे, किंतु एक आम ऐसा देखा कि जि-

---

१ ऐसी प्रतियां बडोदा ज्ञानमंदिरमें महाराज श्री हंसविजयजीके पुस्तक संग्रहमें मौजुद हैं।

सका फल फूल कुछभी नहीं था। बाहशाहने बागवानसे पूछा, इस वृक्षकी यह दशा क्यों? मालीने कहा–जहांपनाह! यह वृक्ष वंध्य है। बादशाहने कहा, तो फिर इसके रखनेसे क्या लाभ? इसे कटवा दो। पासमें सोनीजी भी खडे थे, आप राजमान्य भी थे। अपने अर्ज करदी कि, बराय महरबानी आप इसे खडा रहने दें, मैं इसको समझा दूंगा। मैं उम्मीद् करता हूं यह वृक्ष एक सालके अर्समें फल देगा! बादशाहने सोनीजीके विनयको मान लिया।

अब सोनीजी रोज बागमें जाकर स्नान करते हैं और अपनी धोतीका पल्ला उस आमके वृक्षकी जडमें निचोडते हैं। साथमें हाथ जोडकर प्रार्थना करते हैं कि, हे वनदेवतामहाराज! मैंने जन्मसे लेकर आज पर्यंत परस्त्रीका संसर्ग नहीं किया है, अपने ब्रह्मचर्यको प्राणोंसेभी अधिक प्रिय मानकर सुरक्षित रखा है। यदि मेरे ब्रह्मचर्यका सच्चा प्रभाव है तो यह वृक्ष फल दे। हुआ भी यही–दूसरे वर्ष सब वृक्षोंसे पहले उस वृक्षके पुष्प आया तथा सबसे प्रथम ही फल भीआये। बागवानने कुछ फल बादशाहको भेट किये, और सब बात सुनाई। बादशाह बहुत खुश हुआ और सोनीजीको बडे आदर सत्कार पूर्वक हाथी परबैठा सारे नगरमें बाजे गाजेके साथ फिराकर राज दरबारमें

ला उतारा और पारितोषिक व पोशाक इत्यादिसे यथोचित सत्कार कर उन्हें उनके घरकी ओर विदा किया। इस घटनाका समय विक्रम संवत् १५२० की आसपासका है। विशेष परिचयके लिये लघुपोशालीय गच्छ पट्टावली और संग्रामसोनीकृत बुद्धिसागर ग्रंथ देख लेना ठीक है। इस पुरुष रत्नकी उत्पत्ति इसी मांडवगढमें थी?।

सहस्रावधानी आचार्य श्रीमुनिसुंदर सूरिजीके प्रशिष्य आचार्य श्रीलक्ष्मीसागर सूरिजीने जिन ११ सुयोग्य मुनियोंको अपने हाथसे आचार्य पदवी प्रदान की थी। उनमेंसे एक आचार्य महाराजका नाम था साधुरत्नसूरि। ये आचार्य बडे वैराग्यवान थे, इनका जीवन चरित्र बडा ही रोचक और हृदयद्रावी है।

ये सूरि महाराज अपने परिवारसहित मांडवगढ पधारे। इनके धर्मोपदेशकी नगरमें बडी धूम मचगई थी, कई धर्मात्मा लोगोंने अनेक धर्म कृत्यों द्वारा अपना अपना जीवन सफल किया।

इसी नगरमें जावडशाह नामा एक श्रीमाली साहूकार रहता था। उस समय उसकी बराबरी करनेवाला अन्य कोई श्रीमाली वहां नहीं था। इसी लिये जावडशाह—'श्रीमालभूपाल' और 'लघुशालिभद्र' इन दो उपनामोंसे संबोधित किया जाता था। इस

पुण्यात्माने आचार्य महाराजश्रीके नगर प्रवेशोत्सवमें दानादि शुभ कार्योंमें एक लाख रुपयोंका व्यय कियाथा।

श्री ऋषभदेव, श्रीशान्तिनाथ, श्रीनेमिनाथ, श्री पार्श्वनाथ, और श्री महावीर स्वामी इन पांच तीर्थंकरों के पांच मंदिर बनवाये। एक ११ सेर सोनेकी और एक २२ सेर चांदीकी एवं दो श्री जिनप्रतिमा बनवई। इन सब मंदिरोंकी और प्रतिमाओंकी प्रतिष्ठा जावडशाहने इन्ही पूर्वोक्त आचार्य महाराजसे करवाईथी। प्रतिष्ठामें उदार दिलके जावडशाहने ११ लाख द्रव्य व्यय कियाथा।

वाहरे! मांडवगढ! तुझे नगर कहिये कि पुण्यभूमि या स्वर्ग कहिये?

अंतिम प्रमाण हमें पट्टावलियों द्वारा यहां तक मिलता है कि, जहांगीर बादशाहके राजकालतक इस नगरीकी ध्वजा खूब फहरातीथी। उक्त बादशाहने इसी नगरमें श्री विजयदेव सूरिजीको महातपा को पदवी दी थी।

इस घटनाका समय विक्रम संवत् १६७४ है।

अभीतक जिन महापुरुषोंका अर्थात् संग्रामसिंह सोनी, जावडशाह और श्री विजयदेवसूरिजीका उल्लेख

ऊपर किया गया है, वह क्रमसे सोलहवी और सतारवी सदीके नररत्न थे। अपने चरित्र नायकका समय उनसे भी दो सदी पहलेका होनेसे उस वक्तका मांडवगढ तो और भी ऋद्धि वृद्धिमें चढता था। पेथडशाहने जो करोडों रुपये धर्मकार्योंमें खर्च किये, इसमें एक और भी कारण था। पेथडशाह व्यापारमें निपुण था इतना ही नहीं, बल्कि उसके पुण्यके प्रभावसे वह, मांडवगढके नायक राजा जयसिंहका मंत्री भी था। इसके इलावा उसका पुण्य ऐसा जबरदस्त था, जिधरको वह हाथ डालता चारों हाथोंसें मानो लक्ष्मी देवी उसका सत्कार करती थी।

"पेथडशाहके प्रसिद्ध कृत्योंका दिग्दर्शन."

१ आचार्य श्री धर्मघोषसूरिजीके पास परिग्रह प्रमाणमें ५ लाख टंक रखा था।

२ गुरु महाराजसे सम्यक्त्व स्वीकार किया उसके उत्सव निमित्त एक एक लड्डु और एक एक टंककी एक लाख पचीस हजार अपने साधर्मिक भाईयों को प्रभावना दी थी।

३ राजा जयसिंहके मांगनेसे चित्रावेल और कामकुंभ जो उसके पास थे राजाको भेट कर दिये थे।

४ एक ही रोजमें १६ योजनका पंथ करके गुरु महाराजके आगमनकी-(पधारनेकी) खबर लाने वाले

आदमीको वधाईमें एक सोनेकी जीभ–(जबान) और बत्तीस हीरेके दांत बनवा दिये थे।

५ बहत्तर हजार सोनामोहरें गुरु महाराजके नगर प्रवेशमहोत्सवमें खर्च की थी।

६ गुरु महाराजकी देशनाको सुनकर १८ लाख द्रम्म खर्च कर ७२ देवकुलिका सहित "शत्रुंजयावतार" इस नामका बडा भारी श्री जिनचैत्य मांडवगढमें बनवायाथा। *

७ सवा करोड रुपया दानशालओं में खर्चकिया।

८ हरएक मासकी द्वितीया, पंचमी, अष्टमी, एकादशी, और चतुर्दशी इन दशदिनोंमें सातही व्यसनके निषेधकी राज्यकी तर्फसे मुनादी–(उद्‌घोषणा) कराई।

९ राजा जयसिंहको समझा कर व्यसनोंसे बचाया।

१० बत्तीस वर्षकी भर जवानीमें स्त्री सहित चतुर्थव्रत–ब्रह्मचर्य व्रतका स्वीकारकिया और यावज्जीव–(ताजिंदगी) विशुद्ध हृदयसे उसका पालन किया।

---

* बाकी अन्य जैनमंदिर कितने बनवाये उनकी नामावलि देनेके लिये अवकाश न होनेसे इतनाही कह देना पर्याप्त है कि, इस कार्यकी संख्याके लिये वाचक महोदय "सुकृतसागर" काव्यका चतुर्थ तरंग और प्रस्तुत हिन्दी ग्रंथ देख लेनेकी कृपा करें।

११ प्रतिदिन प्रातः और सायं दोनों समय प्रतिक्रमण करनेका नियम।

१२ त्रिकाल प्रभुपूजा करनेका नियम।

"कुछ विशेष–ज्ञातव्य बातें."

संसारमें प्रसिद्ध बात है कि, "जैसा आहार वैसा डकार" मनुष्यके अंतःकरणके भाव उसके कार्योंसे जाने जाते हैं। मूल ग्रंथमें पेथड मंत्रीके ब्रह्मचर्य व्रतका वर्णन किया गया है, उसमें खास एक बात बडे मारकेकी है जो नीचे लिखो जाती है। ताम्रलिप्ती नगरीके भीमसिंह–सोनीने ब्रह्मचर्य व्रत स्वीकार किया उसकीखुशीमें अनेक ठिकाने समान धर्मवाले ब्रह्मचर्य व्रतधारी धर्मात्माओंको पोशाकेंभेजीं। शासन प्रभावक समझकर पेथडशाहको भी एक पोशाक भेजी। पेथडशाहने आदर पूर्वक वह पोशाक लेली परंतु पहनी नहीं। पेथडशाहको इस वारेमें कुछ उदासीन देख कर उनकी धर्मपत्नीने पूछा कि, आप इस पोशाकको उपयोगमें क्यों नहीं लाते? शेठजीने उत्तर दिया–प्रिये! ब्रह्मचारिकी दी हुई वस्तु ब्रह्मचारीको ही शोभा देतीहै, मेरे जैसे कायरोंको उन पुरुषसिंहोंका वेश नहीं शोभता! हां यदि तूं अनुमति दें तो मैं भी ब्रह्मचर्यव्रत लेकर उन उत्तम पुरुषोंकी पंक्तिमें दाखिल हो सकता हूं। मैं संसारके विषय सुखोंको

हलाहलविष समझता हुआभी तेरे आग्रह और लिहाजसे भोगी बना हुआ हूं ! मेरी इच्छातो विरक्त होनेकी ही है। स्त्रीने सविनय प्रार्थना की, प्राणनाथ! 'सतो पत्यनुगामिनी'–पतिव्रता सती स्त्रीका धर्म है कि, जो पति देव कहें सहर्ष उनकी आज्ञाका पालन करें। आप बडी खुशीसे अपना मनोरथ सफल करें, मैं भी साथमें हो तैयार हूं। बस फिर देरी ही क्या थी? बडे आनंदसे उत्सव पूर्वक ३२ वर्षकी युवावस्थामें दंपतिने विधि सहित गुरुमहाराजके समक्ष ब्रह्मचर्यव्रत ले लिया। धन्य है ऐसे धर्मधन पुरुष सिंहों को!!

"उपकार स्मरण और गुरुभक्ति."

ऊपर श्री धर्मघोषसूरिके प्रवेशका संकेतमात्र वर्णन कियाजाचुका है इस लिये पुनः लिखना पुनरुक्ति है, तो भी एक बात खास वर्णनीय है। वह यह कि–जब कभी शाह गुरुमहाराजके अपने पर हुए उपकारोंको स्मरण करता तब उसका दिल भर आता, कंठ गदगद होजाता, हाथ जोड कर परम विनीत भावसे प्रत्यक्ष वा परोक्षमें उसके मुखसे जो जो उद्‌गार निकलते, उनका लेश मात्र 'दिग्दर्शन सुकृत सागर' नामा ग्रंथमें ग्रंथकर्त्ताने कराया है; उनमें से

वाचकोंके विनोद एवं आनंदके लिये एक काव्य यहां पर उद्धृत किया जाता है।

प्रक्षाल्याक्षतशीतरश्मिसुधया गोशीर्षगाढद्रवै-
र्लिप्त्वाऽभ्यर्च्य च सारसौरभसुरद्रुत्थ प्रसूनैः सदा।
त्वत्पादौ यदि वाहयामि शिरसा त्वत्कर्तृकोपक्रिया-
प्राग्भारात्तदपि श्रयामि भगवन्नापर्णतां कर्हिचित् ॥१॥

भावार्थ—हे भगवन्! यदि मैं पूर्णमासीके अखंड चंद्रसे निकली सुधा—अमृतसे आपके चरणोंको प्रक्षालन करूं, गोशीर्ष नामा उत्तम बावना चंदनसे विलेपन करूं, उत्तम सुगंधवाले कल्पवृक्षके पुष्पोंसे पूजन करूं, इस प्रकार प्रक्षालित—विलिम्पित—पूजित आपके उत्तम चरणोंको सदा अपने मस्तकोपरि उठाये फिरूं, अर्थात् आप उपकारीको मैं सदा अपने शिर पर लिये फिरूं, तो भी हे गुरु देव! आपके ऋणसे कबी भी किसी प्रकार भी मैं अनृण नहीं हो सकता हूं!"

सत्य है! सच्चे गुरु भक्तोंके गुरुओंप्रति ऐसे ही—हार्दिक भाव प्रकट होते हैं!। फैजी नामा शायर फारसीके कविने भी एक स्थान पर ऐसा ही भाव प्रकट करते हुए गुरुकृपाके संबंधमें लिखा है।

बहाए रव्वेश मेदानम्, बनो मे जैं। नमे अर्जद ।

अगर मौला नजर शाजद, बहाए वे बहा गर्दद ।

अर्थात्—" हे स्वामिन्! आपकी कृपाके विना मेरी कींमत आधे जों जितनी भी नहीं है। और यदि आपको कृपा पूर्ण है तो मेरे जैसा धनवान् भो कोई नहीं है। बस फिर तो मैं बादशाहोंका भी बादशाह हूं । "

पुरातत्व के प्रथम अंक में विद्वद्वर्य मुनिश्री पुण्य-विजयजीने एक प्रशस्तिका विवेचन करते हुये पेथड-शाहके सुकृतोंका वर्णन लिखा है, संभव हैकि वह पेथड भी यही होकि जिसका उल्लेख इस ग्रंथमें है। इतना तो अवश्य अनुमान हो सकता है कि, प्रशस्तिमें लिखे पेथडके समयमें भोलाकर्ण बालक था। तब भोला कर्णका बालक होना पेथडशाहके अस्तित्वका समय है। क्योंकि सारंगदेव पेथडका समानकालीन था। उसका समय विक्रम संवत् १३३० से १३५१ तकका है। सारंग देवका उत्तराधिकारी भोला कर्ण था, जो १३५१ में गादी पर बैठा था और ६ वर्ष १० मास १५ दिन तक गुजरातका छत्रपति रहा था।

एक पर्यालोचना—

कितनेक लोग शंका करते हैं कि, इतना धन आज क्यों नहीं ? उन महानुभावोंको समझना चा-

हिये कि, सदाकाल किसी भी मनुष्यकी या देशकी परिस्थिति एक जैसी नहीं रहती है। आज सुनते हैं कि, पश्चिम देशमें दश करोडका मालिक एक सामान्य हालत वाला कहा जा सकता है। तारीख ९ अगष्ट १९२३ के जैन पत्र (भावगनर—काठियावाड) से पता चला है कि, अमेरिकन जॉन डेविड्सन रोक फॅलरकी आमदनी आजसे वीस वर्ष पहले वार्षिक दश करोड डॅालर थी ! आज तो न जाने कितनी बढी या घटी होगी ?। आज काल हिन्दुस्तानके पीछे दुर्व्यसन थोडे नहीं लगे हुए हैं ! हिंदुस्थानको तो प्रायः व्यसनोंने ही नष्ट भ्रष्ट कर दिया है ! कुछ महीने पहले लाहौर (पंजाब)के एक उर्दू पत्र में लिखा सुना था कि, हिन्दुस्थानी लोग गत ११ वर्षोंमें डेढ अरबकी शराब पी गये ! कहिये वह डेढ अरब रुपया हिंदका ही स्वाहा हो गया न ? ऐसी तो फ-जूल खरची इतनी बढ गई हैं कि, जिसके उल्लेखका एक बडा भारी पोथा सा बन सकता है ? दिग्दर्शन मात्र देखनेकी इच्छा होवें तो "भारतदुर्भिक्ष" नामा पुस्तक देख लेना, आशा है उसके पढनेसे थोडी घनीतो कुंभ करणकी नींद अवश्य खु-लेगी !

"ग्रंथ रचनाका परिचय और उपसंहार."

पेथडशाहका वर्णन यद्यपि श्रीमुनि सुंदरसूरिकृत पट्टावलोमें, श्री रत्नमंदिरगणिकृत उपदेश तरंगिणीमें, पंडित सोम धर्म विरचित उपदेश सप्ततिमें, उपदेश रसाल में, झांझण प्रबंधमें, तथा गुर्जर प्राचीन काव्यसंग्रहमें भी मिलता है* तथापि इसका मूल आधार पुस्तकका नाम "सुकृतसागर" है, जो ग्रंथ संस्कृतमें है। जिसके रचयिताका शुभ नाम महाकवि श्री रत्नमडनगणि है। इन महात्माका सत्ता समय इस मुजिब निर्णीत है। जन्म—विक्रम संवत् १४५७। दीक्षा १४६३। पंडित पद १४८३। वाचक—(उपाध्याय) पद १४९३। आचार्य पद १५०२ और स्वर्गवास १५१७। इसलिये चरित्रनायक पेथडशाहके समयके साथ इस ग्रंथकी घटना बहुत निकट संबंध रखती है।

ऊपर लिखा जा चुका है कि, पेथडशाह मंत्रीके संबंधमें पूर्वाचार्योंने एवं पंडित महानुभावोंने अनेक ग्रंथोमें इस उद्धारक पुरुषके सुकृत्योंका वर्णन किया

---

* केवल मांडवगढका वर्णन देखने वालोंको आयने अकबरी और तवारीख मालवा आदि उर्दू—फारसीकी पुस्तकें देखलेनी योग्य है।

है, परंतु वह सब ग्रंथ संस्कृत भाषामें होनेसे आज-कालके संस्कृत विद्याके प्रायः प्रतिपंथिरूप जमानेमें सर्व साधारणको उपकारी नहीं हो सकते हैं। इसी वास्ते इसको गुजराती भाषामें किसी प्रकार मिहनत परिश्रम उठाकर-विक्रम संवत् १९७० में अहमदाबाद निवासी श्रद्धालु धर्मात्मा शेठ मोहनलाल मगनलाल ज्होंरोने किसीकी मारफत लिखवा कर प्रकाशित कराया है। बेशक ! सेठजी साहबने गुजरात देशवासी एवं गुजराती भाषाके प्रेमियोंको तो पेथडशाहके चरित्रामृतका पान कराया, परंतु इस गुजराती भाषाके अनभिज्ञ संस्कृतशून्य इतर भाइयोंके लिये तो वही बारांवरसी कालवाला ही हिसाब बना रहा ! तथापि "बहुरत्ना वसुंधरा" "परोपकाराय सतां विभूतयः" के हिसाबसे लब्ध प्रतिष्ठ-ख्याति पात्र-स्वनाम धन्य-शान्तमूर्त्ति मुनिमहाराज १०८ श्री हंसविजयजी महाराजने हिन्दी भाषा प्रेमियोंके उपकारार्थ यह सुश्लाघ्य उद्यम किया है। आपको सच्चारित्रता, सदाचार-कर्त्तव्यपरायणता, विरक्तता, उदारता, उपकारिता आदि अनेक गुणोंसे भरी हुई जीवनीको पढनेसे अवश्य आनंद प्राप्त होता है। आपकी जीवनी हंसविनोद नामा पुस्तकको

प्रस्तावनामें इसी लेखककी लेखिनीसे लिखी गई है। क्योंकि आपका इस लघुतम धर्मबंधुपर प्रथमसेही धर्म प्रेम अधिक है और इसी लिये प्रसंग पाकर निजकृत धर्मकृत्योंमें मुझ नाचीजको भी हिस्सेदार बनानेकी कृपा करते रहते हैं। प्रस्तुत पुस्तकको प्रस्तावनाके लाभकी तरह हंसविनोद पुस्तककी प्रस्तावनाका लाभ भी आपने इसी सेवकको दिया है। आपने अपनी कृति ओर अपने नामके साथ सेवकको मिलाकर सेवकोपरि जो उपकृति, कीहै इस बातका सेवक आपका ऋणी है।

अंतिम वक्तव्य.

इस लघु परंतु अत्युपयोगी आपके लिखे इस ग्रंथकी प्रस्तावना लिखनेको आपकी आज्ञाको शिरोधार्य समझकर मैनें यथामति यथाशक्ति उस पवित्रात्माकी जीवनोपर कुछ प्रकाश डालनेका उद्यम किया है। सज्जन गुणग्राहियोंका धर्म है मेरी भूल और धृष्टताका ख्याल न कर वह अपनी प्रकृतिके योग्यही कार्य करें। पेथडशाहके पुत्ररत्न झांझणशाहके लिये मूल पुस्तकमें काफी जिकर आचुका है इस लिये इनके संबंधमें मैनें यहां कुछ नहीं लिखा है पाठक महाशय मूलपुस्तकको देखनेकी ही कृपा

करें । पेथडशाहके संबंधमें भी यात्रादिके प्रसंगों पर कुछ विशेष विचार करना चाहाथा परंतु स्थान और समयके संकोचसे इतनेसे ही संतुष्ट होकर विशेष जिज्ञासुओंको सुकृतसागर ग्रंथके देखनेकी सूचना करता हुआ संक्षिप्त रुचिवालोंको इसी ग्रंथको साद्यन्त पढनेकी प्रार्थना करता हुआ अपनी स्खलनका मिथ्या दुष्कृत देता हुआ पुनरपि ऐसे शुभ कार्यके करनेकी अभिलाषा रखता हुआ पाठक महोदय क्षमा कीजिये मैं आपसे विदा होता हूं ।

निवेदक–

सुप्रसिद्ध जैनाचार्य १०८ श्रीमद्विजयानन्दसूरि (आत्मारामजी) शिष्यरत्न स्वनामधन्य श्री लक्ष्मीविजयजी शिष्यमुनि महाराज श्री हर्षविजयजी शिष्य प्रसिद्ध विद्या प्रेमी मुनि श्री वल्लभविजयजी शिष्य पंन्यास मुनि ललितविजय.

होशियारपुर (पंजाब.)

विक्रम १९८० श्रावण शुक्ला द्वितीया ।

श्री सोमतिलकसूरिपादैर्विरचितं श्रीमंरूपदुर्ग-मंत्री पृथ्वीधर (पेथरूकुमार) साधुकारित-चैत्यस्तोत्रम्.

श्री पृथ्वीधरसाधुना सुविधिना दीनादिषु दानिना
भक्तश्रीजयसिंहभूमिपतिना स्वौचित्यसत्यापिना ।
अर्हद्भक्तिपुषा गुरुक्रमजुषा मिथ्यामनोषामुषा
सच्छीलादिपवित्रितात्मजनुषा प्रायःप्रणश्यद्रुषा ॥ १ ॥

नैकाः पौषधशालिकाः सुविपुला निर्मापयित्रा सता
मन्त्रस्तोत्रविदीर्णलिङ्गविघ्नश्रीपार्श्वपूजायुजा ।
विद्युन्मालिसुपर्वनिर्मितलसद्देवाधिदेवाह्वय-
ख्यातज्ञाततनूरुहप्रतिकृतिस्फूर्ज्जत्सपर्यासृजा ॥ २ ॥

त्रिःकाले जिनराजपूजनविधिं नित्यं द्विरावश्यकं
साधौ धार्मिकमात्रकेऽपि महतीं भक्तिं विरक्तिं भवे ।
तन्वानेन सुपर्वपौषधवता साधर्मिकाणां सदा
वैयावृत्यविधायिना विदधता वात्सल्यमुच्चैर्मुदा ॥ ३ ॥

श्रीमत्संप्रतिपार्थिवस्य चरितं श्रीमत्कुमारक्षमा-
पालस्याप्यथवस्तुपालसचिवाधीशस्य पुण्याम्बुधेः ।
स्मारं स्मारमुदारसंमदसुधा सिन्धूर्मिषून्मज्जता
श्रेयः काननसेचनस्फुरदुरुप्रावृड्भवाम्भो मुचा ॥ ४ ॥

सम्यङ्न्यायसमर्जितोर्जितधनैः सुस्थानसंस्थापितै-
र्यें ये यत्र गिरौ तथा पुरवरे ग्रामेऽथवा यत्र ये ।
प्रासादानयनप्रमाद्जनका निर्मापिताः शर्मदा-
स्तेषु श्रीजिननायकानभिधया सार्द्धं स्तुवे श्रद्धया ॥ ५ ॥

पञ्चभिःकुलकम्

श्रीमद्विक्रमतस्त्रयोदशशतेष्वब्देष्वतीतेष्वथो
विंशत्याभ्यधिकेषु मंडपगिरौ शत्रुंजयभ्रातरि ।
श्रीमानादिजिनः १ शिवाङ्गजजिनः श्रीउज्जयंतान्विते
निम्बस्थूरनगेऽथ तत्तलभुवि श्रीपार्श्वनाथः ३ श्रिये ॥६॥

जीयादुज्जयिनीपुरे फणिशिराः ४ श्रीविक्रमाख्ये पुरे
श्रीमान्नेमिजिनो५जो नौमुकुटीकापुर्यां च६पार्श्वादिमौ ७ ।
मल्लिः सोघहरोस्तु बोधनपुरे ८ पार्श्वस्तथाशापुरे ९
नाभेयो बनघोषकीपुरवरे१०शान्तिर्जिनोऽर्यापुरे११ ॥७॥

श्रीधारानगरेथवर्द्धनपुरे श्रीनेमिनाथः पृथक् १२, १३
श्रीनाभेयजिनोथ चन्द्रकपुरोस्थाने १४ सजीरापुरे १५ ।
श्रीपार्श्वो जलपद्र१६दाहडपुरस्थानद्वये १७ संपदं
देयाद्वीरजिनश्च हंसलपुरे १८ मान्धातृमूलेऽजितः १९ ॥८॥

आदीशो धनमातृकाभिधपुरे २० श्रीमङ्गलाख्ये पुरे २१
तुर्यस्तीर्थंकरोऽथ चिक्खलपुरे श्रीपार्श्वनाथः श्रिये २२ ।
श्रीवीरो जयसिंहसंज्ञितपुरे २३ नेमिस्तु सिंहानके २४
श्रीवामेयजिनः सलक्षणपुरे २५ पार्श्वस्तथैन्द्रीपुरे २६ ॥९॥
शान्त्यै शान्तिजिनोस्तु ताल्हणपुरे२७ऽरो हस्तनाद्ये पुरे २८
श्रीपार्श्वःकरहेटके २९ नलपूरे ३० दुर्गे च नेमीश्वरः ३१ ।
श्रीवीरोऽथ विहारके ३२ स च पुनः श्री लम्बकर्णीपुरे ३३
खण्डोहे किल कुन्थुनाथ३४ऋषभः श्रीचित्रकुटाचले३५।१०।
आधः गर्णविहारनामनि पूरे ३६ पार्श्वश्च चंद्रानके ३७
वङ्कयामादिजिनोऽथ३८तीलकपुरेजीयाद्द्वितीयोजिनः३९।
आद्यो नागपूरे४०ऽथ मध्यकपुरे श्रीअश्वसेनात्मजः ४१
श्रीदर्भावतिकापुरेऽष्टमजिनो ४२नागह्रदे श्रीनमिः४३ ।११।
श्रीमल्लिर्धवलक्कनामनगरे ४४ श्रीजीर्णदुर्गान्तरे ४५
श्रीसोमेश्वरपत्तने च फणभृल्लक्ष्मा ४६ जिनो नन्दतात् ।
विशः शंखपुरे जिनः ४७ सचरमः सौवर्त्तके ४८ वामन-
स्थल्यांनेमिजिनः४९.शशिप्रभजिनोनासिक्यनाम्न्यांपुरि५०
श्रीसोपारपुरे५१ऽथ रूणनगरे ऽ५२थोरुङ्मलेऽ५३थ प्रति-
ष्ठाने पार्श्वजिनः ५४ शिवात्मजजिनः श्रीसेतुबन्धे५५ श्रिये।
श्रीवीरो वटपद्र५६नागलपुरे५७ष्ठुक्कारिकायां ५८ तथा
श्रीजालन्धर५९देवपालपुरयोः६० श्रीदेवपूर्वेगिरौ ६१ ॥१३॥
चारूप्ये मृगलाञ्छनो जिनपति६२र्नेमिःश्रिये देणते ६३
नेमीरत्नपुरे ६४ऽजितोर्बुकपुरे ६५ मल्लिश्च कोरण्टके ६६ ।

पार्श्वौ ढोरसमद्रनीवृति ६७ सरस्वत्याऽऽह्वये पत्तने
कोटाकोटिजिनेन्द्रमण्डपयुतः६८ शान्तिश्च शत्रुञ्जये६९ ॥१४॥
श्रीतारापुर७० वर्द्धमानपुरयोः ७१ श्रीनाभिभूसुव्रतौ
नाभेयो वटपद्र७२गोगपुरयो७३श्चन्द्रप्रभः विच्छने ७४
ओंकारेऽद्भुत तोरणं ७५ जिनगृहं मान्धातरित्रिक्षणं ७६
नेमिर्विंकननाम्नि ७७ चेलकपुरे श्रीनाभिभू७८र्भूतये ॥१५॥

इत्थं पृथ्वीधरेण प्रतिगिरिनगरग्रामसीमं जिनाना-
मुच्चैश्चैत्येषु विष्वग्हिमगिरिशिखरैः, स्पर्द्धमानेषु यानि ।
बिम्बानि स्थापितानि, क्षितियुवतिशिरः, शेखराण्येष वन्दे
तान्यप्यन्यानि यानि, त्रिदशनरवरैः, कारिताऽकारितानि १६

अनुक्रमणिका.

विषय.	पृष्ट.
पेथडकुमार का परिचय	१
पुत्ररत्न की प्राप्ती	७
पेथडकुमार अपने घर पर पहुंच गया	१३
गुरु भक्ति	१६
ब्रह्मचर्य व्रत	२०
राज्य के अंदर सात व्यसनों का निषेध	२३
पेथडकुमार की तीर्थयात्रा	२४
ज्ञानभक्ति और ज्ञानमंदिर	३०
पेथडकुमारकी प्रभुभक्ति	३२
कलशारोपण	३६
पेथडकुमारका स्वर्गवास	३७
झांझन कुमार मंत्रीकी तीर्थयात्रा	३८
सारंगदेव राजाका मन्तव्य	४४
कर्णावती में प्रवेश और ९६ राजाओं का बंधन मुक्त होना	४६

स्वदेश में शुभागमन ४८
मांडवगढ में ग्रन्थकारो की उत्पत्ति ५०
कविवर मंडन और धनदराजका ग्रन्थागार ५०
श्री विजयदेव सूरीश्वरको मांडवगढ पधारने
के लिये जहांगीर बादशाहका आमंत्रण ५३
जहांगीर बादशाह से मुलाकात ५८
मंडप दुर्ग में महात्माका चातुर्मास ५९
श्री सुपार्श्वनाथकी प्रतिमाकी उत्पत्ति और
इसतीर्थकी प्रख्याति ६०
मांडवगढ मंडन श्री सुपार्श्व जिन स्तवन ६१
मांडवगढतीर्थका दूसरा स्तवन ६२
मांडवगढ मे श्री प्रमद पार्श्वनाथका मंदिर ६४

॥ श्री शान्तिनाथ प्रभोः पादपद्मेभ्यो नमः ॥

ॐ

श्रुत्वा गुरु गिरं पृथ्वी[1], धरोऽथ पृथु-पुण्यधीः
चैत्यंन्यस्ताद्यतीर्थेशं, द्वा सप्ततिजिनालयम्
शत्रुंजयावताराख्यं, [2]दंड कलाशांकितम्।
द्रम्माष्टादश लक्षाभि, र्मंडपान्तर चीकरत्

मांडवगढकामन्त्री

अथवा

पेथडकुमार का परिचयः

परिचय

देवलोकके समान अवन्ति प्रदेशमें नीमाड़के अन्तर्गत नान्दुरी नामक एक पुरी थी जिसमें ऊर्ध्व केशीय (उ-सवाल) वंशका एक देदाशाह नामक

१ पेथडकुमार. २ सुवर्ण.

गृहस्थ रहता था, उसकी अवस्था उस समय दारिद्र्य पीड़ित होनेसे दयाजनकथी जब वह किसी तरह अपनी दरिद्रावस्था को नहीं मिटा सका तो उसने जंगल में भटकना शुरु किया, कहते हैं कि समय सदैव एकसा नहीं रहता, उसके भाग्यचक्रने पलटा खाया और दैवयोगसे उसे 'नागार्जुन' नामक योगीराज के दर्शन हुए। जब उस महात्माने उक्त देदाशाह को देखा तो वह प्रसन्न हुआ और उसके चिन्होंसे परोपकारी पुरुष जानकर उसको "सुवर्णसिद्धि" की क्रिया बतलाई। देदाशाहने तदनुसार सुवर्ण बनाया और उस महात्मासें आज्ञा लेकर अपने घर लौट आया।

योगीराज की आज्ञानुसार देदाशाह अपनी क्रियासे सुवर्ण बनाता और बहुतसे दीन दुःखियोंका दुःख दूर करनेमें सदैव तत्पर रहता था।

जब उसकी दया और परोपकारिता की खुशबू फैलने लगी और राजा प्रजा को मालूम हुआ कि देदाशाह सुख चैनसे रहता है और उसके पास बहुतसा द्रव्य है तब किसी बहानेसे उस राजाने देदाशाह को कैद करलिया! जिससे उसकी सुपत्नि विमला सेठानीसे उसका वियोग हुआ, परन्तु श्रीस्थंभन पार्श्वनाथ के ध्यान के प्रभावसे वह आफत शीघ्रही नष्ट हो गई और देदाशाह व उसकी पत्नि सकुशल "विद्यापुर" चलेगये।

एकसमय किसी कार्यवश देदाशाह देवगिरि "दौलताबाद" गये, वहां शुभ भावसे कर्मों की निर्जरा के लिए उपाश्रयमें जाकर सर्व मुनिराजों का वन्दना करता हुआ यह चिन्तवन करने लगा कि धन्य है ऐसे मुनिवरों को जिन्होंने संसार को असार जानकर छोड़दिया और मोक्ष की प्राप्ति के लिए ऐसी कठिन तपस्या कर रहे हैं इसी तरहकी अनेक प्रकारकी शुभ भावनाएं भाता हुआ देदा सेठ श्रावकों के पास जा बैठा। उस समय वे श्रावक लोग एक पौषधशाला बनवाने का विचार कर रहेथे, देदासेठ विचार करने लगा कि पौषधशाला बनवानेसे महान् पुण्य होता है, क्यों

कि यह साधुओं की बडी दुकान गीनी जाती है वहां जाकर भव्य प्राणी व्रतादि क्रिया करते हैं। देदासेठ ने श्रावकोंसे प्रार्थना की कि कृपया यह पौषधशाला बनवानेकी मुझे आज्ञा दीजिए, इसपर श्रावकोंमेंसे एक श्रावक ने कहा कि सेठजी! तुम्हारा कहना यथार्थ है परन्तु यह पौषधशाला तो संघ ही बनवाना चाहता है अतएव आप ही को आदेश नहीं मिल सकता! यह सुनकर देदासेठ बहुत ही आग्रह करने लगा, इस पर एक श्रावकने कहा कि शेठजी, अगर आपका ऐसा ही आग्रह है तो सुवर्ण की पौषधशाला बनवादो! सेठने इस बात को शीघ्र ही स्वीकार करली, पर

गुरु महाराजने कलिकालकी विषमता दीखाकर समझाया कि सुवर्ण की पौषधशाला बनवाना उचित न होगा।

उसी समयमे शहरमे एक व्यापारी केशर के ५०॥* थैले विक्रयार्थ लायाथा उनको कोई लेने वाला नहीं मिलता-था इससे उक्त व्यापारी बड़ी चिन्ता में था उसको सन्तुष्ट करने व नगर को अपयशसे बचाने के लिए देदासेठ ने केशर के सब थैले खरीद लिये और उनमेंसे ४९ थैले केशर के भरे हुए चूनेमें डलवा कर सुवर्ण मयी पौषध-शाला बनवादी और १॥ थैला केशर का परमात्माकी पूजन के लिए तीर्थों में भेज दिया। देदासेठ की ऐसी उ-

* ५०॥ गुण्यो.

दारता देखकर सबलोग आश्चर्य क-
रने लगे जब यह समाचार राजाने
सुने तो वह भी बड़ा खुश हुआ और
उसने देदासेठ का सम्मान करके बहुत
मूल्य के वस्त्रालंकारसे उसको सुशो-
भित किया।

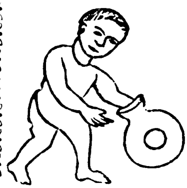

पुत्ररत्न की प्राप्ती

किस्मत के आगे,
किसीकीकुछ नहीं चलती।
सब ही तेरे होते,
कि जब तकदीर है फिरती ॥१॥

सौभाग्यवश विमला सेठानीको पुत्र
रत्न की प्राप्ति हुई। माता पिताने जन्म

महोत्सव करके पुत्र का नाम "पेथरू कुमार" रक्खा। जब पेथरूकुमार योग्य वय का हुआ तो उसको व्याकरणादि की उचित शिक्षाएं दिलाई गई, वह अपने बुद्धिबलसे कला कौशल्य में निपुण होगया तब उसका विवाह बन्धन एक सेठ की पद्मिनी नामक कन्यासे करवाया गया। पेथरूकुमार व पद्मिनी आनन्दपूर्वक रहने लगे इनके संयोगसे "झांझनकुमार" नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ। एक समय ऐसा था कि देदासेठ पुत्र विना तरसता था अब तो पुत्र क्या, पौत्र का भी सुख देदासेठ को प्राप्त हो गया। झांझन कुमार की लघु वयमें ही चमत्कृत बुद्धि देख कर उसके पितामह

ने उसको समग्र शास्त्रीय शिक्षा दिलाना आरंभ किया। झांझनकुमार उचित शिक्षाएं पाकर विद्वान हो गया। थोड़े ही समयमें अपने कुटुम्ब को छोड़कर देदासेठ व उसकी विमला सेठानी स्वर्गस्थ होगये।

—⟡—

पेथड़कुमार के माता पिता के परलोक वास हो जाने के बाद पूर्व सञ्चित पाप कर्मों के उदय से उसकी आर्थिक स्थिति दिन बदिन गिरने लगी यद्यपि उसके पिता सुवर्ण सिद्धि की क्रिया जैसी संपत्ति उसको दे गया था लेकिन भाग्य चक्र के फिरने से उसकी वह क्रियाभीनष्ट होगई! ऐसी हालत में भी पेथड़कुमार अत्यन्त धैर्य धारण करके और अपने धर्म पर कटि-

बद्ध रहकर इधर उधर मजदूरी कर अपना उदर पोषण करने लगा।

एक समय सूर्य समान तेजस्वी तपगच्छाधिपती श्रीमज्जैनाचार्य श्री धर्मघोषसूरीश्वर विद्यापुर म पधारे और बड़े बड़े धनाढ्य लोगों को धर्मोपदेश देकर परिग्रह परिमाण व्रत धारण कराने लगे, उस वक्त पेथड़कुमार को गुरुवन्दन करते हुवे देख कर वहां बैठे हुवे श्रावक लोग उसकी हालत पर हंसने लगे और सूरिजी से प्रार्थना करने लगे कि स्वामीनाथ! "लाख वर्षे लक्षाधिपती और क्रोड़वर्षे कोटीध्वज" ऐसे पेथड़कुमार को परिग्रह परिमाण व्रत क्यों नहीं देते? इस पर गुरुमहाराज ने कहा कि हे भाग्यवानो!

लक्ष्मी का गर्व कभी नहीं करना चाहिये क्योंकि लक्ष्मीका स्वभाव स्थिर नहीं है यह चंचलास्त्री के समान एक को छोड़ कर दूसरे के पास जायाही करती है इस लिये अपने वैभवका मद किसीको नहीं करनाचाहिये ऐसा कह कर गुरुमहाराजने पेथड़कुमार को कहा कि भाई! तुम पञ्चम अणुव्रत-को ग्रहण करो यह व्रत तुमको इस लोक और पर लोक में हितकारी होगा। इत्यादि। यह उपदेश सुन कर पेथड़-कुमार बीसहजार रुपयों का परिमाण करने लगा तब उसके हाथ में अच्छी अच्छी रेखाएं दिखपड़ने से आचार्य महाराज ने पांच लाख रुपयों का परि-माण व्रत करवाया और कहा कि हे

श्रावक ! तू किसी तरहका खेद मत-कर, ये हंसने वाले लोग अज्ञानी हैं लक्ष्मी क्षण भर में राजा को रंक और रंक को राजा बना देती है तेरा भाग्य चक्र तुझको शिघ्र ही अच्छी अवस्था में लाने वाला है ऐसा वचन सुन कर पेथडकुमार गुरुमहाराज को वन्दना कर कर हर्षित होता हुवा अपने घर-की तरफ जाने लगा और कहने लगा कि संसार सागर में फंसे हुये प्राणियों को ऐसे सद्गुरु महाराज ही तार स-कते हैं ऐसे निःस्वार्थ गुरुकी जगत् में बहुत ही आवश्यकता है कितनेक अभिमानी मनुष्य गुरु को नहीं मानते परन्तु वास्तव में ऐसे प्राणी, दया के योग्य हैं इत्यादि विचार करता हुवा

पेथमकुमार अपने घर पर पहुंच गया।

देशान्तर गमन.

स्थान मुत्सृज्य गच्छन्ति ।
सिंहाः सत्पुरुषाः गजाः ॥
तत्रैव निधनं यान्ति ।
काकाः कापुरुषा मृगाः ॥ १ ॥

सिंह सत्पुरुष और हाथी एक स्थान को त्यागकर स्थानान्तर चले जाते हैं ऐसा विचार करके पेथम सेठ सपरिवार मालवा प्रान्त में जाने के लिये रवाना होगया, कितनेक दिन बाद इधर उधर घूमता हुवा वह मांमवगढ के दरवाजे पास जा पहुंचा शहर की शोभा देखकर उसको बहुत आनन्द प्राप्त हुवा और शुभ शकुन लेकर न-

गरमें प्रवेश किया व व्यापार निमित्त दुकान खोल कर धंधा करने लगा।

एक दिन घी बेचनेवाली उसकी दुकान पर आई और भाग्यवश उससे उसको चित्रावेल की प्राप्ति हुई उसके प्रभाव से पेथड सेठको दुकानमें अखूट घी भरा रहने लगा यह कौतुक देख कर वहां के राजा ने पेथड कुमार व उसके पुत्र झांझन कुमार को मंत्रीपद देदिया।

एक वक्त राजाकी आज्ञा लेकर पेथड कुमार सपरिवार तीर्थयात्रा करने के लिये चला, पहले जीरावला पार्श्वनाथ की यात्रा करके आबूके पहाड पर चढा वहांपर श्री आदिनाथ भगवान की यात्रा कर के औषधियों की

प्राप्ति के लिये जंगल में घूमने लगा आखिरकार उसको एक बूटी की प्राप्ति होने से उसका मनोरथ सफल हुवा। उस बूटी के प्रभाव से वह लोह का सुवर्ण बनाने लगा जब उसने बहुतसा सुवर्ण बना लिया तो उस सुवर्ण को ऊंटो पर लदवा कर अपने स्थान मांडवगढ को भेज दिया और फिर श्री ऋषभदेव भगवानके मंदिर म जाकर विचार करने लगा कि सुवर्ण के लोभ से मैंने षट्काय जीवोंकी जो विराधना की है उसके लिये मुझे धिक्कार है, अपने स्वार्थ के लिये निरपराध प्राणियोंकी हिंसा करना महान् पापबन्ध का कारण है खैर जो होना था सो हो गया अब मैं अपने सब सुवर्णको

तिर्थोद्धार व गरीबों के वास्ते खर्च करुंगा इसी प्रकार के विचार करता हुवा पेथड़कुमार अपने घर पर आ कर गरीबोंको दान देने लगा।

गुरु भक्ति।

एक समय माधव नाम का भाट पेथड़कुमार के पास आ कर बधाई देने लगा कि हे स्वामिन्! इस लोक और परलोकमें सुख देने वाले जिन सद्गुरु महाराज का आपने आश्रय लिया है वे ही गुरु महाराज श्री धर्मघोषसूरि थोड़े दिनों में यहां पधारेंगे यह समाचार सुनकर पेथड़कुमार को बहुत ही आनन्द प्राप्त हुवा, और ऐसी ब-

धाई देने वाले उस माधव जाट को सोने की जीन, व हीरेके दांतों की पंक्ति, बहुमुल्य वस्त्र, पांच घोड़े, और एक अच्छा गांव पारितोषिक में दिया, इसके बाद बहत्तर हजार द्रव्य खर्च करके गुरु महाराज का बड़ा भारी प्रवेश महोत्सव कराया।

एक वक्त पेथड़कुमार हाथ जोड़-कर आचार्य महाराजसे प्रार्थना करने लगा कि हे स्वामिन्! मैंने जो आ-पके पाससे परिग्रह परिमाण व्रत ग्रहण किया है उससे मेरे पास बहुत अधिक धन हो गया है उसको किस कार्य में लगाना चाहीये कि जिससे मेरा क-ल्याण हो। उसकी यह प्रार्थना सुन आचार्य महाराज ने फरमाया कि हे

मंत्रीवर ! वह लक्ष्मी स्थिर नहीं रहती इसकी तीन गति अवश्य होती है यानि दान, भोग और नाश। अतएव इसको मंदिर और प्रतिमाए बनानेमें व स्वधर्मीवात्सल्य में व्यय कर देना उचित है क्योंकि इन कार्यों में जो पुण्योपार्जन होता है वह केवलज्ञानी भगवान ही जान सकते हैं। इत्यादि सदुपदेश सुनकर पेथडकुमारने मांडवगढ में अट्ठारह लाख रुपये खर्च कर कर ७२ देरियों सहित श्री आदीश्वर भगवान का मंदिर बनवाया और उसका श्री शत्रुञ्जयावतार नाम रक्खा और पृथक २ स्थानों पर ८३ जिनालय बनवाए उनमें से कितनेक के नाम इस प्रकार है १ श्री सिद्धाचलपर श्री शां-

तिनाथ स्वामीका मंदिर. २ ओंकारपुर में. ३ शारदापत्तन में. ४ तारापुर में ५ दर्नावती में. ६ सोमेशपत्तन में ७ मान्धाता में. ८ धारानगरी में. ९ नागनगर में. १० नागपुर में. ११ नासिक में. १२ बम्रोदे में. १३ सोपारक में १४ रतनपुर में. १५ कोरमागांव में. १६ करेमातीर्थ में. १७ चंद्रावती में. १८ चितोम में. १९ चारूप में. २० ऐन्द्रीपुर (इन्दौर) में. २१ चिक्खल में. २२ बिहार में. २३ वामनस्थली में. २४ जेपुर में. २६ उज्जैन में. २६ जालन्धरनगर में. २७ सेतुबंध में. २८ पशुसागर में. २९ प्रतिष्ठानपुर में. ३० वर्धमाननगर में. ३१ पर्णविहार में. ३२ हस्तिनापुर में. ३३ देवालपुर में. ३४ जोगपुर में.

३५ जेसंगपुर में. ३६ लिम्बपुर में. ३७ स्थुरादरि मे. ३८ सलक्षणपुर में. ३९ जीर्णदुर्ग (जुनागढ) में. ४० धवलपुर (धोलका) में. ४१ मंकोडीपुर में. ४२ त्रिक्रमपुर में. ४३ देवगिरी (दौलताबाद) में. इत्यादि अनेक स्थानों में सुवर्ण के कलशध्वजा दण्ड सहित जिनालय ब नवाकर पृथ्वी को विभूषित की उस समय उन वे जिनालय पर फरकती हुई ध्वजा पताकाए अपने हाथों से भव्य जीवों को स्वर्ग लक्ष्मी प्राप्त करने के लिये आमन्त्रण कर रहीं थीं।

ब्रह्मचर्य व्रत।

एकदिन पेथडकुमार अपनी स्त्रीको कहने लगा कि हे प्रिया! इस दुनिया

में चतुर्थव्रत के समान दूसरी वस्तुओं में कुछ भी सार नहीं है इसके प्रभाव से कुसंपको करानेवाले नारदऋषी क्लेश को निवारण कर मोक्ष पासके, सुदर्शन सेठ की सूलीका सिंहासन होगया । इस लिये इस अपार संसार समुद्र को तैरने के लिये यह व्रत नौका समान है इसके प्रभाव से देवता भी नमस्कार करते हैं । अपना जीवन क्षणिक है इस लिये तेरी इच्छा हो तो मैं शीलव्रत धारण करूं । एसा सुनकर उस पवित्र हृदयाने प्रार्थना की कि हे स्वामिन्! आप आनन्द से यह उत्तम व्रत अंगीकार करो मैं अंतराय डालने वाली नहीं हूं । पती पत्नी की शंका निवारण होनेपर योवन रूपी पहाड

को ठोकर मार कर और परस्पर के प्रेम स्नेह को तिलाञ्जली दे कर बत्तीस वर्ष की युवावस्था में दोंनों महानुजावों नें चतुर्थव्रत अंगीकार कर लिया। और इस व्रत का एसी सुन्दर रीति से पालन किया कि उनके वचन से तो ठीक लेकिन पेथरुकुमार के वस्त्र के प्रजाव से ही लीलावती राणीका महान रोग नष्ट हो गया जो कि लाखों रुपये के खर्च करने और अनेक मंत्र जंत्र जरूी बूटी आदि विविध उपचारोंसें जी नष्ट नही होताथा। एसे ही राजा का पटहस्ती पिशाच लगने से मृत्यु तुल्य होगया था वह जी मंत्री के वस्त्र उढाने से अच्छा होगया इस अद्भुत चमत्कार को देखकर राजाने पांच वस्त्र

सहित लक्ष द्रव्य से मंत्रीश्वरका सन्मान किया और इससे मंत्रीश्वर के शील की महिमा सारे शहर में फैल गई।

राज्य के अन्दर सात व्यसनों का निषेध।

द्युतं च मांसं च सुरा च वेश्या
पापर्धिश्चोरी परदारसेवा ॥
एतानि सप्त व्यसनानि लोके
घोरातिघोरं नरकं नयंति ॥ १ ॥

एक दिन मंत्रीश्वरने राजा से प्रार्थनाकी की आप अपने देश में ऊपर दिखलाए हुवे व्यसनों का सेवन करने वालों को हुकुम के जरिये रोक करावें तो बहुत उपकार होगा और खास करके इन सात व्यसनों की

रोक पर्व तिथियोंकोतो अवश्य ही होनी चाहिये यानि दुज, पंचमी, अष्टमी, एकादशी, और चतुर्दशी के रोज सप्तव्यसनका कोई सेवन न करे ऐसा आज्ञापत्र प्रकट होना चाहिये क्यों कि व्यसन सेवन से नल राजा तथा पाण्डव जैसे महान पुरुषों को भी बहुत दुःख हुवा है। यह प्रार्थना सुन कर और इसको उचित समज कर राजा जयसिंह देव ने घोषणा द्वारा सप्तव्यसनों का सेवन बन्द करवा दिया।

पेथड़कुमार की तीर्थयात्रा.

एक समय पेथडकुमार विचार करने लगा कि जगत में मनुष्य जन्म

पा कर अखूट लक्ष्मी सम्पादन की इससे कुछ कल्याण नहीं हुवा, न जाने कल क्या होने वाला है इसकी कुछ खबर नहीं पड़ती। मिट्टी के बर्तन जैसी इस देह का क्या भरोसा है अ-तएव मनुष्य जन्म सार्थक करने के लिये तीर्थ शिरोमणि श्री सिद्धाचल-जी की यात्रा करनी चाहिये। एसा निश्चय करके पेथड़कुमार ५२ देरासरों सहित बड़ा संघ निकाल कर यात्रा करने चला। वहां पहुंच कर श्री ऋ-षभदेव स्वामी के दर्शन पूजन से अ-पना जन्म सफल किया और खूब दान पुन्य करके श्री गिरनारजी जा पहुचा वहां पर योगिनीपुर निवासी, अला-उद्दीन बादशाह से सन्मानित पूर्ण

नामक अग्रवाल दिगम्बर श्रावक बड़ा संघ लेकर आया हुवा था। दोनों संघ के लोग पर्वत पर चढनें लगे उस समय दोनों के आपस में तीर्थ के बाबत बाद विवाद होने लगा। एक पक्ष अपना तीर्थ होने का प्रमाण बतलाने लगा तो दूसरा पक्ष भी अपनी नजीरें देने लगा। तब एक वयोवृद्ध पुरुष ने क्लेश निवारण का एक तीसरा रास्ता दिखला कर कहा कि तुम दोनो संघ पती साथ साथ पर्वत पर चढो और इन्द्र माला पहनने के वक्त सुवर्ण द्रव्य की बोली बोलो जो अधिक सोना देवे उसी का यह तीर्थ समझा जाय गा। यह बात दोनो संघ पतियों ने मंजूर करली क्यों कि शूरवीर पुरुष

शस्त्र से, पंडित लोग शास्त्र से, कायर हाथों से, स्त्रियां गालियों से और वैश्य लोग पैसे से लड़ा करते हैं। इस फैसले से सब लोग बड़े हर्ष से रैवत गिरी पर चढ़ने लगे और बाल ब्रह्मचारीचक्रचूड़ामणि श्रीनेमिनाथ भगवान की टूंक पर पहुंच कर दर्शन पूजन का लाभ प्राप्त किया। जब इन्द्रमाला पहिनने का समय निकट आया तब लोग इस दृष्यको देखने के लिये उत्सुक हो गये। पहले पहल मंत्रीश्वर पेथड़कुमारने पांच धड़ी सोने से बोली बोलना शुरु किया फिर परस्पर बोली बढाते बढाते पेथड़कुमार छप्पन धड़ी सुवर्ण देने को तैयार हो गया, उस समय दिगम्बर संघवीको

अधिक बोली बोलने की हिम्मत नही हुई। तब सबने मिल कर इन्द्रमाला पेथरुकुमारको पहिनादी और उक्त तीर्थ श्री श्वताम्बर संघ का स्वीकार कर लिया।

मंत्रीश्वर ने इन्द्रमाला से अपने कंठको अलंकृत करके अपना जन्म सफल माना। सर्वत्र मांगलिक बाजे बजने लगे और सबके हृदय हर्ष से आनन्दित हो गये। अन्तमें पेथरुकुमार जन्म जरा की पीडाको मिटाने वाली आरती उतारकर और गिरनार तीर्थपर श्वेताम्बर संघका स्वतंत्र अधिकार सिद्ध करके पर्वतसे नीचे उतरा और यह विचार करके कि देवद्रव्य चुकानेमें

विलम्ब करने से बहुत दोष लगता है अतः अपनी प्रतिज्ञानुसार छप्पन धमी सोना जाएमारमें देकर देवगुरु की जक्ति पूर्वक स्वधर्मी वात्सल्य करनेके बाद् तपस्याका पारणा किया। उसी समय दूसरे धम्मोंन्नतिके निमित्त जी ११ लाख रुपये [१] वहापर पेथमकुमार व्यय करके माएमवगढ जाने के लिये रवाना हो गया।

(१) "मांडवगढनो मत्री पेथडकुमार" नामक गुजराती पुस्तकमें "वलीरूपाना टकाओनी ११ लाख धडिओं बीजी पण त्यां खरचता हुवा" इस माफिक छपा हुवा है यह भूलसे लिखा गया हो ऐसा मालुम होता है। (लेखक)

ज्ञानभक्ति और ज्ञानमंदिर ।

एक समय बहुमूल्य वस्त्रालङ्कारोसे विभूषित प्रातःकाल के वक्त मंत्रीश्वर पेथड़कुमार घोड़ेपर सवार होकर बड़े आडम्बर से गुरु वन्दना करने के लिये पोशधशाला में गया। भक्तिपूर्वक गुरु महाराज को नमस्कार करके गुरु महाराजका व्याख्यान सुनने लगा, उस समय गुरुमहाराज भगवती सूत्रका कथन कर रहे थे उस कथन में वारं वार श्रीगोतमस्वामी का नाम सुनकर पेथड़कुमार कहने लगा कि हे स्वामिन्! मेघमाला देखकर जैसे मोर नाचता- है वैसे ही श्रीवीर प्रभुकी पवित्रवाणी सुनकर मेरा मन बहुत ही रञ्जित

होता है अतएव मैं इसको सम्पूर्ण सुनूंगा, एसी प्रार्थना करके पांच दिनोंमें सम्पूर्ण श्रीभगवती सूत्र (विवाह प्रज्ञाप्ति) सुना उसमें श्री गौतमस्वामीका नाम ३६ हजार वक्त आया उसपर एक एक करके ३६ हजार सुवर्ण मोहर चढाकर ज्ञानकी अपूर्व भक्तिकी।

इसी तरह भृगूकच्छ (भरूंच) आदि शहरां में बड़े बड़े ७ सरस्वती भण्डार खोल कर उनमें अनेक ग्रन्थोंका संग्रह करदिया।

पेथडकुमारकी प्रभुभक्ति।

धर्मशिरोमणि सुश्रावक पेथडकुमार जैसे राज्य कार्य में तथा व्यापार कार्य में निमग्न है वैसेही परमात्मा की त्रिकाल पूजन करने में भी कभी प्रमाद नहीं करताथा। एक वक्त मध्यान्ह समय, केवलज्ञानरूपी लक्ष्मी के क्रीडागृह समान, गृह चैत्यालय में उक्त मंत्रीश्वर प्रभु पूजन करके अङ्गरचना कररहा था, इतने में सारङ्गदेव राजाकी फौजके मांडवगढ पर चढआने के समाचार मिले, उसी समय जयसिंह देव राजाने मंत्रीको बुलानेके लिये एक सुभटको भेजा परन्तु मंत्री नहीं मिला तब राजाने दूसरा सुभट भेजा

उसको मंत्री की पत्नीने कहा कि अभी मंत्रीश्वर देवपूजन में रुके हुवे हैं इतने में फिर तीसरा आदमी आया और उसने दासीके साथ प्रार्थना करवाई कि इसी समय अत्यन्त आवश्यकीय कार्य आजानेसे मंत्रीश्वरजी को महाराज याद फरमा रहे हैं इस पर पद्मनीने अमृत जैसे वचनोंसे उतर दिया कि भाई अभी तो दोघडीको देर है।

राजाकी आज्ञाका मंत्रीश्वरने पालन नहीं किया और प्रभु भक्ति में लयलीन रहा मगर इस पर राजा क्रुद्ध नहींहुवा और चढाई करनेका मुहुर्त्त निकट होनेसे राजा स्वयं मंत्रीश्वरके घर पर आगया उस समय देव विमान जैसे सुन्दर मन्दिर में पेथडकुमार श्री

पाश्वनाथ प्रभुकी अंग रचना कररहा था और एकमाली पेथड़कुमारको अङ्ग रचना के लिये पुष्प देता जा रहा था। उस मालीको उठा कर राजा, धीरेसे मालीकी जगहपर बैठकर मंत्रीको फूल देने लगा परन्तु प्रभु भक्ति में मग्न होनेसे मंत्रीश्वरको कुछ भी खबर नहीं पड़ी। लेकिन अनुक्रमसे जैसे चाहिये वैसे फूल न मिलने से प्रधानने मुंह फिरा कर देखा तो राजा साहब दीख पड़े! मंत्रीकी देव भक्तिसे प्रसन्न हो कर राजाने कहा कि घबराओ मत स्थिर चित्त से पूजा करो मैं नीचे बैठता हूं ऐसा कहकर राजा उचित स्थानपर बैठ गया। मंत्री पेथड़कुमार भी अङ्ग रचनाका कार्य सम्पुर्ण करके राजाके

पास पहुंचा और नमस्कार करके उचित आसन पर बैठगया। यद्यपि राजासे मिलने में मंत्रीको बड़ी देर लगी तो भी राजा नाराज न होकर खुश होकर कहने लगा कितुम्हारी प्रभु भक्ति देखकर मुझे अत्यन्त आनन्द हुवा।

यह सब पुन्य का ही प्रभाव है शास्त्रमें भी कहा है कि प्रीतिपात्र स्त्रीका, चतुर मित्रका, निर्लोभी सेवकका, और निरन्तर प्रसन्न रहे ऐसे स्वामीका मिलना विना पुण्योदय के नहीं हो सक्ता है। अब राजा तथा मंत्री विचार करने लगे कि शत्रुने जो चढाई की है उसका मुकाबला करना या संधि करना इस बात का निर्णय

हो जाने के बाद, लड़ाई की तैयारी करके फौजको रवाना करदी। थोड़े ही वक्त में शत्रु सैन्यको पराजय कर कर जयसिंहदेव की सेना, विजयपताका फरकाती हुई वापिस आई।

कलशारोपण।

उपदेश सप्तति नामक ग्रन्थके पेथड़ अधिकार में लिखा है कि सुविख्यात पेथड़कुमार मंत्रीने श्री मंडप दुर्ग (मांडवगढ) के जिनालयोंपर अपने प्रतापके जैसे उज्ज्वल सुवर्ण के ३०० कलश चढाये.

यः श्री मंरूप दुर्गस्थ
जिन चैत्य शतत्रये ॥
अस्थापय त्स्वर्ण कुम्नान्
स्व प्रतापानिवो ज्वलान् ॥१॥

पेथडकुमारका स्वर्गवास।

पेथरूकुमार अपने शरीरकी अवस्था देखकर अपना अन्तिम समय निकट समझकर शान्ततासे परमात्मा का ध्यान करने लगा, संसारकी असारता विचारने लगा। वास्तवमें यह शरीर पाणी के परपोटे के समान नश्वर है इस लिये किसी के साथ वैर नाव न रख कर सर्व जीवोंसे क्षमा याचना करके श्री अरिहंत नगवानका

ध्यान करता हुवा, समाधियुक्त, इस असार संसार को छोड़कर स्वर्गलोक को पेथड़कुमार प्रयाण करगया।

झांझन कुमार मंत्रीकी तीर्थयात्रा।

पिताजी के वियोगसे झांझनकुमार अनेक प्रकारके विलाप करने लगा। बड़ेबड़े अमीर उमराव तथा राजा, विविध प्रकार से झांझनकुमार को शोक निवारण के लिये आश्वासन देते थे पर जिसका हृदय पिताके विरह से विव्हल होगया है ऐसा झांझनकुमार व्याकुलतासे अपने दिन व्यतीत करने लगा। इस अर्से में एक समय झांझ-

कुमार अपने चित्त की शांति के लिये गुरुमहाराजके पास उपदेश श्रवण करने के लिये वन्दना करके बैठ गया। गुरुवर्य ने भी समयोचित उपदेश देना प्रारम्भ किया इससे झांझन कुमारका शोकरूपी दावानल शान्त होगया तब गुरुमहाराज ने फरमाया कि हे मंत्रीश! संघकी भक्ति करनेसे सम्यक्त्व निर्मल होता है इतना ही नहीं किन्तु इससे तीर्थंकर नाम कर्म का भी बन्धन होता है ऐसे संघ का अधिपती होना बड़ा दुर्लभ है लेकिन पूर्व पुण्य के उदय से ऐसा सुयोग मिल सकता है इत्यादि गुरु महाराज के सदुपदेश से झांझनकुमारने विक्रम संवत १३४० माघ सुदी ५ के रोज

शुभ मुहुर्त्त में तीर्थयात्रा करने के लिये २॥ ढाइ लाख मनुष्योंके साथ प्रयाण किया। उस वक्त अनेक वाजिन्त्र बजने लगे चारों तरफ हाथियों की गर्जना होने लगी, घोड़े हिनहिनाट करने लगे, भाट चारण बिरदावली बोलने लगे, यात्रियों की ललनाए धवल मंगल के गीतगाने लगीं। इसी तरह अनेक प्रकारका संघ में आनन्द होने लगा इतनेमें तपागछाधिपति श्री धर्मघोष सूरि महाराज भी सपरिवार संघमें पधार गये।

राजाने भी रक्षा के लिये सुभट आदि संघके साथ भेजे थे। ऐसे उत्तम जलूसके साथ संघ आनन्दपूर्वक रवाना होकर करहेड़ा गांवमें पहुंचा।

वहां क्षेत्रपाल के उपद्रवको हटाकर जिनालय का जिर्णोद्धार कराकर सात मंजिलवाला जिनेश्वर देवका प्रासाद बनवाया। वहां से अनुक्रमसे सघ आबूराज पहुंचा। संघवी ने मोतियों के स्वस्तिक प्रमुख से जिनेश्वर देवकी भक्तिकी। आबूकी यात्रा करके पालन-पुर, पाटन, आदि नगरों में हो कर कितने क दिनों में संघ निर्विघ्नतासे श्री शत्रुञ्जय तीर्थको देखने लगा यानी दूरसे गिरीराज के दर्शन करने लगा। उस रोज वहींपर पसाव फाल कर मंत्रीश्वर ११*मूढा गेहूं को (लाल रंग को)

"माण्डवगढनो मंत्री" नामक पुस्तक के २३२ वें पृष्ठ में "संघ अणहिल्लपुर पाटन में आया, वहां यात्रा करके अनुक्रम से शत्रुञ्जय पर्वत पर आया, वहां एक बड़ा स्वामी वात्सल्य किया

लापसी बनवाकर संघ में बांटने के निमित्त से तीर्थदर्शन का आनन्द प्रदर्शित कराने लगा।

यहां से रवाना हो कर पवित्र श्री संघ वाजिन्त्रादि नादयुक्त नाटक और धवल मंगल के बड़े ठाठके साथ पालीताने जा पहुंचा। वहां श्री सिद्ध गिरीकी बड़े आनन्दसे यात्रा करके श्री गिरनारजीकी यात्राकी। झांझन कुमार ने सिद्धाचलजी से रैवत गिरी तक ५६ धड़ी सोनेकी लम्बी ध्वजा

---

११ मूंढा गेहूंकी लापसी बनाई–अनेक प्रकार की मन गमती रसोई से सबको जिमाए, भाव पूर्वक यात्रा करके पालीताने आया।" इस पकारसे जो लिक्खा है वह सम्भव मालुम नहीं होता क्यों कि ११ मूढा लापसी से २॥ लाख मनुष्य नहीं जोम सकते (देखो मूल ग्रन्थ)–लेखक.

चढाई इसी प्रकार नाना प्रकार के शुभ कृत्यों से अपना जन्म सफल करके वहां से रवाना होकर वणथली होते हुवे कर्णावती के पास मुकाम किया।

सारंगदेव राजाका मन्तव्य

कर्णावतीके राजा सारंगदेवने अपनी नगरी के पास मांडवगढ के संघके पड़ावकी रचना तथा मंत्री के उदार दिल का वर्णन एक भाट के मुंह से सुनकर संघके मुकाम पर जाने का विचार किया। तदनुसार राजा रवाना हो कर संघके पड़ाव की तरफ गया। मंत्रीश्वरको राजाके शुभागमन की खबर मिलने से अपने पड़ाव को बावटे

तोरण आदि से शृंगार कर स्वयं राजाकी पेशवाई में गया और बड़े सन्मान के साथ राजा को अपने तम्बू में पदार्पण करवाया उस वक्त मंत्रीकी पत्नी ने राजाको मोतयों से बधा कर सिंहासन पर बैठाया। राजा, झांझनकुमार आदिका स्नेह भाव से आनन्द मंगल पूछने लगा इस अवसर पर संघ के बड़े बड़े श्रावकों ने राजा को लक्ष द्रव्य को भेट की।

" तृणं लघु तृणात्तूलं
तूलादपि हि याचकः"

इस वाक्य के अनुसार वह राजा अपना हाथ, किसी के हाथ के नीचे नहीं रखताथा इस कारण से मंत्री जब राजाको ताम्बुल देने आया तब राजाने उसके हाथ से बीड़ा झपट

लिया, वह देख कर मंत्री चकित हो गया। मंत्री ने राजाका अभिप्राय स-मझ कर लोगों को दृष्टि के सामने कपूर लाकर एक दम राजा की पसली को शिखा पर्यन्त भर दी। कपूर गि-रने लगा तब राजा ने अपना हाथ नीचे किया उसी दम लोगों का जय जय शब्द होने से सामन्तों के साथ राजा भी हंसपड़ा इस कौतुक को देख कर सब लोग मंत्रीश्वर के धैर्य और बुद्धि बल का यशोगान करने लगे यह कार्य किसी ने नहीं कियाथा और मंत्री ने कर दिखाया इससे राजाने प्रसन्न हो कर इच्छित वस्तु मांगने के लिये मंत्रीश्वरको कहा, तब मंत्रीने प्रार्थना की कि आपकी आज्ञानुसार

आप जैसे कल्पवृक्ष और अविचल वचन पालने वाले स्वामोसे किसी उचित मोके पर अर्ज करुंगा।

कर्णावती में प्रवेश और ९६ राजाओं ाकबंधन मुक्त होना।

उपरोक्त घटनाओं के पश्चात् राजा सिंहासन से उठ कर सर्व संघवियों को हाथियों पर बिठा कर महोत्सव पूर्वक अपनी नगरी में ले गया।

एक समय मंत्रीश्वर को मालुम हुवा कि सारंगदेव राजाने ९६ राजाओं को कैद किये हैं यह जानकर उनको बन्धन मुक्त कराने का निश्चय किया। उचित अवसर पाकर मंत्रीश्वर ने

राजा से प्रार्थना की कि मुज को आपने जो वचन दिया है वह पूरा करने के लिये अब मैं याचना करता हूँ। तब राजानें फरमाया कि खुशी से कहो। मंत्री ने कहा कि मैं इतना ही मांगता हूं कि कारागृह में जिन ८६ राजाओं को आपने कैद कर रखे हैं उनको मुक्त कर दिये जाएं। यह सुन कर यद्यपि राजाकी इच्छा उनको छोड़ने की नथी तो भी मंत्रीश्वर की प्रार्थना स्वीकार कर उनको छोड़ दिये।

सर्व राजाओं को झांझन कुमारने एक एक घोड़ा और पांच पांच वस्त्र अर्पण कर के अपने अपने नगर को विदा कर दिये। इस कारण से पूजनीय महाजन ने मिल कर मंत्रीश्वर

को "राजबन्दी छोटक" इस नामकी उपाधी प्रदान की।

स्वदेश में शुभागमन।

कितनेक समय तक सारंगदेव राजाकी शीतल छाया में रह कर आज्ञा प्राप्त करने के बाद संघ स्वदेश की तरफ रवाना हुवा। अपने अद्भुत कार्यों से सब को आश्चर्य चकित करता हुवा और द्रव्य की वृष्टी बरसाता हुवा संघपती ताम्रावती (खम्भात) आदि नगरों में श्री स्थंभन पार्श्वनाथ महाराज आदि जिनेश्वर भगवान की यात्रा करता हुवा मांडवगढ पास जा पहुंचा।

राजा तथा नगर निवासियों ने संघ के शुभागमन को खबर सुन कर घर घर तोरण पताकाए बंधवाई और बडे आनन्दके साथ प्रवेश महोत्सव कराया गया। सवारी में राजा के साथ हाथी पर चढ कर मंत्रीश्वर हर्षनाद सहित संघयुक्त अपने घर जा पहुंचा और अन्त में सब का उचित सत्कार कर सबको अपने अपने स्थान पर विदा किया और मांडवगढ के सर्व ज्ञाति के लोगो को भोजन कराकर और संघको भक्ति करके राजा का उत्तम सत्कार करने के बाद आयभार मान कर मंत्रीश्वर अपने दिन धर्म ध्यान में व्यतीत करने लगा।

मांडवगढ में ग्रन्थकारों की उत्पत्ति।

श्री विज्ञप्ति त्रिवेणी की प्रस्तावना में ग्रन्थकारों की बाबत निम्नानुसार लिक्खा है-

---

कविवर मंडन और धनदराजका ग्रन्थागार।

मालवा प्रान्त में मांडवगढ (मंडपदुर्ग) इतिहास प्रसिद्ध स्थान है यह शहर औरंगजेब के समय तक तो बड़ा आबाद और मशहूर था परन्तु आज तो उसक वैसी ही दशा है जैसीकी

गुजरात प्रान्तके गन्धार बंदर को। मांरुव या मांरू जिस समय उन्नति के शिखर पर चढा हुवा था उस समय वहां पर जैन धर्मकी जो बमी उन्नतिथो। उस समय यह स्थान जैन धर्म में मालवा प्रान्त का केन्द्र गिना जाता था। बमे २ धनाढ्य और सत्ताधिकारो जैन वहां पर रहा करते थे। कहते हैं कि वहां पर उस समय जैनोयों की कई लाख को संख्याथी। बहुत से क्रोमपती और लक्षाधिपतो जैन इस शहर की शोजा को बढाते थे। कहा जाता है कि उस समय इस शहर में एक जी गरीब श्रावक नहीं था। जो कोई दारिद्रपीडित जैन बहार से आताथा तो शहर के श्रावक लोग

एक एक रुपया उसे सहायतार्थ देते थे और इससे आगन्तुक मनुष्य अच्छी सम्पत्तिवाला बनजाता था।

जैन इतिहासके देखने से पता लगता है कि मंत्री पेथड़, झांझन, जावड़, संग्रामसिंह आदि अनेक श्रावक यहांपर हो गये हैं जो विपुल ऐश्वर्य और प्रभूत-प्रभुता-के स्वामी थे।

इस प्रकरण के सिरे पर जिन दो भ्राताओं का नाम लिखा हुवा है वे भी ऐसे ही श्रावकों म सेथे, ये श्रीमाली जाति के सोनीगिरा वंश के थे।

इनका वंश बड़ा गौरवशाली और प्रतिष्ठित था। इनका सम्पूर्ण वर्णन करने का यहां स्थान नहीं है। मंत्री मंडन और धनदके पितामह का नाम

ऊंझण था। इसके १ चाहरू. २ बाहरू ३ देहरू. ४ पद्म. ५ आल्हा. ६ पाहु नामक ७ पुत्र थे इनमें से देहरू और पद्म तो मांडवगढ के तत्कालीन बादशाह आलमशाह के दीवान थे और बाकी के अन्यान्य व्यवसायों में अग्रगण्य थे। इन ७ भाइयों के बहुत से पुत्र थे जिनमें से मंडन और धनदराज विशेष प्रसिद्ध थे।

मंडन बाहरू का छोटा पुत्र था और धनदराज देहरू का एक मात्र लड़का था। इन दोनों चचेरे भाइयों पर, लक्ष्मी देवी की जैसी प्रसन्न दृष्टि थी वैसी ही सरस्वती देवी की भी पूर्ण कृपा थी यानि ये जैसे बड़े भारी श्रीमान् थे वैसे ही उच्च कोटिके विद्वान भी थे।

मंडन ने व्याकरण, काव्य, साहित्य, अलङ्कार और संगीत आदि भिन्न २ विषयों पर मंडन शब्दाङ्कित अनेक ग्रन्थ लिखे है। इन ग्रन्थों में से आठ नौग्रन्थ तो पाटन के उपरि उल्लिखित–वाडी–पार्श्वनाथ के भंडार में मंडन ही के (संवत १५०४ में) लिखवाये हुवे विद्यमान हैं। इनके नाम इस प्रकार हैं–१ काव्य मंडन (कौरव पाण्डव विषयक). २ चम्पू मंडन (द्रौपदी विषयक). ३ कादम्बरी मंडन (कादम्बरी का सार). ४ शृंगार मंडन. ५ अलंकार मंडन. ६ संगीत मंडन. ७ उपसर्ग मंडन. ८ सारस्वत मंडन (सारस्वत, व्याकरण पर विस्तृत विवेचन) और ९ चन्द्रविजय प्रबन्ध।

मंडन के जीवन चरित्र के विषय में उसके मित्र महेश्वर नामक कवीने काव्य मनोहर नामक सात सर्गों का एक छोटासा काव्य लिखा है उसमें मंडन के पूर्वजों का और मंडन का संक्षेपमें जीवन वृत्तान्त उल्लिखित है। उसकी भी दो प्रतियें मंडन की लिखवाई हुई एक ही लेखक की लिखी हुई उक्त भाण्डार में विद्यमान हैं।

मंडन की भांति धनदराज या धनदभी बड़ा अच्छा विद्वान था। "धनदत्रीशती" नामक एक ग्रन्थ राजर्षि भर्तृहरीकी "शतक त्रयी"का अनुकरण करनेवाला, उसका लिक्खा हुवा है। यहां पर इसका विशेष उल्लेख नहीं कियाजाताहै तो भी इतना अवश्य

कह देना चाहिये कि इन ग्रथों में इनका पाण्डित्य और कवित्व अच्छी तरह प्रगट हो रहा है।

श्री विजयदेव सूरीश्वरको मांडवगढ पधारने के लिये जहांगीर बादशाहका आमन्त्रण.

अकबरके पीछे उसका लड़का जहांगीर बादशाह देहली में तख्तनशीन हुवा* और पड़ाव डालकर मांडवगढ में रहता था। उसने फरमान लिख

* मुम्बई के श्री अध्यात्मज्ञान प्रसारक मंडल की तरफ से गुजराती लीपी में छपी हुई जैन ऐतिहासिक रासमाला प्रथम भाग की समालोचना के २६ वे पृष्ठपर श्रीयुत् मोहनलाल दलीचंद देसाई बी. ए. एल. एल. बी. ने लिखा है उससे उधृत।—लेखक

कर श्री विजयदेवसूरीश्वर महाराज को अपने पास बुलवाया। उस वक्त श्री विजयदेव सूरिजी खम्भात में बिराजमान थे। फरमान पढ कर उक्त सूरिजी मांडवगढ जाने के लिये रवाना हुवे और नेमिसागर को राधनपुरसे बुलाये। नेमिसागरजी अपने साथ वीरसागर, भक्तिसागर, प्रेमसागर, शुभसागर, श्रीसागर, शांतिसागर, गण सागरआदि शिष्यों सहित राधनपुरसे मांडवगढ जानेके लिये निकले। जब वहाके संघने कहाकि मार्गमें मोहनपुर पहाडी गांव आता है और जैसे नाम तैसे गुणवाली सांपिनी, वोढिनी नामक नदियां आती हें इस लिये बडी सावधानीसे पधारना। धर्मके

प्रज्ञावसे सब अच्छा होगा ऐसा कहकर गुरुवर्य अहमदावाद होकर वरोदे पहुंचे। वहां श्री जिनेश्वर देव के दर्शन किये और विगयका त्याग कर आम्बिल; नीवी, आदि तप करते हुवे श्री मांरुवगढ पहुंचे।

जहांगीर बादशाह से मुलाकात

मांरुवगढ पहुंचकर सब मुनिजनोंने श्री विजयदेव सूरिजी को वन्दन किया। सूरिजी की बादशाह के साथ मुलाकात हुई और वार्तालाप से खुश होकर श्री विजयदेव सूरीश्वर को "सवाई महातपा" नामक उपाधि प्रदान की। श्रावक लोग प्रतिदिन महोत्सव करने

लगे । फिर नेमिसागर उपाध्यायजी जहांगीर बादशाह को मिले वहां परवाद हुवा । उसमे जीतनेसे बादशाहने नेमिसागरजी को " जगजीपक " नामक विरुद दिया ।

मंडप दुर्ग में महात्माका चातुर्मास

उक्त रासमाला की समालोचना के चोतीस वें पृष्ट में लिख्या है कि संवत १६१६ में जो महाशय श्री हीर विजयसूरीश्वर के हस्त दिक्षित हुवेथे वे श्री कल्याण विजयजी उपाध्याय श्री मंरूपाचल दुर्गको यात्राकरने को पधारेथे और चातुर्मास नी वहीं कियाथा।

श्री सुपार्श्वनाथकी प्रतिमाकी उत्पत्ति और इसतीर्थकीप्रख्याति ।

उपदेश तरंगिणी में लिक्खा है कि वनवास में श्री लक्ष्मणजीने सीताजी के पूजन के लिये सातवें श्री सुपार्श्वनाथ भगवान की मूर्त्ति बनाई उस मूर्ति के सबब से इस तीर्थ की प्रख्याति हुई और चैत्यवन्दन में नीचे लिखे माफिक कहने में आया ।

" मांडगढनो राजियो,
नामे देव सुपास ।
ऋषभ कहे जिन समरतां,
पहुंचे मननी आस ॥ "

मांडवगढ मंडन श्री सुपार्श्व जिन स्तवन

पालणपुर में पास जिनन्द प्यारा ॥ चाल ॥

। फाग ।

मांडवगढ में सुपार्श्व प्रभुजी, प्यारा
मांडव० ॥ ए अंचली ॥
बनवास में लक्ष्मणजीनेए,
निपजाया जिन बिंबसारा मांडव. ॥१॥
सीता सतीको पूजन खातर,
जग जनमन मोहन गारा मांडव. ॥२॥
शील प्रभावे वज्र मय मूर्त्ति,
होगई तेजे जीसा तारा मांडव. ॥३॥
अद्‌भुत महिमा अखंड प्रभुका,
संकट सब फेटण हारा. मांडव. ॥४॥
हंसवाहना हिंदोले जिव्हापर,
जो जिन गुण गायन कारा. मांडव. ॥५॥

मांडवगढतीर्थका दूसरा स्तवन।

॥ जावो जावो नेमि पिया,
थारी गति जानी रे—ए देशी.
तीरथ पवित्र मांडवगढ,
मनो हारारे. आंकणी.
तीहां शोभे शांतिनाथ,
सातमा सुपार्श्वनाथ ।
विजयानन्द सूरीश्वर,
मूर्त्तिरूपे प्यारा रे ॥ तीरथ. ॥ १ ॥
रामचंद्र लक्ष्मण वीर,
सीतासती अति धीर ।
प्रभु पूजा करी इहां,
शिव सुखकारा रे ॥ तीरथ. ॥ २ ॥
प्रमद पारस प्रभु,
जगतना एतो ऋभु ।

देवल तेमनु हतुं,
जीवन आधारा रे ॥ तीरथ. ॥ ३ ॥
ते पार्श्व प्रभुनु कीधु,
स्तोत्र जिन चंद्रे सिधु ।
संसार दावानी सम-
स्याथकी प्रचारा र ॥ तीरथ. ॥४॥
पेथड़ कुमार मंत्री,
झांझनकुमार तंत्री ।
संग्राम सिंहजैन योद्धा,
पुण्यना भंडारारे ॥तीरथ. ॥ ५ ॥
मोटा मोटा ग्रंथकार,
ज्ञानकोशना भरनार ।
मंडन कवि धनदराज,
जैन सारा रे ॥ तीरथ. ॥ ६ ॥
रतन बाई साथे आवी,
शिवकोर बाई संघ लावी ।

ओगणी सें तोंतेर,
साल उदारा रे ॥ तीरथ. ॥ ७ ॥
गुरु लक्ष्मी विजय सारा,
हंस विजय स्तवन कारा।
यात्रा करी मेरु तेरस,
दिन रविवारा रे ॥ तीरथ. ॥ ८ ॥

मांडवगढ़ मे श्री प्रमद पार्श्वनाथका मंदिर।

"संसार दावानल दाहनीरं" इस स्तुति की समस्या पूर्ति वाला प्राचीन स्तोत्र उपलब्ध होता है इससे साबित है कि पेश्तर इस मांडवगढ में श्री प्रमद पार्श्वनाथ का जिनालय था। उक्त स्तोत्र निम्नानुसार है-

॥ श्रेयोदधानं कमला निधानं,
पार्श्वं स्तुवेहं प्रमदाभिधानं।

स्वश्रेयसं श्रीसहकार कीरं,
संसार दावानल दाह नीरं ॥ १ ॥
निर्धूत दोषं कृतधर्म पोषं,
प्रोन्मुक्त योषं हत दुष्ट दोषं ।
सकेवल श्री रमणीक वीरं,
संमोह धूली हरणे समीरं. ॥ २ ॥
अनिंद्य विद्या वदनं वदान्यं,
पार्श्वं स्तवीमि त्रिदशेन मान्यं ।
कर्म क्षयादाप्तनवाब्धि तीरं,
माया रसादारण सार सीरं ॥ ३ ॥
अमंद मंदार सुदाम दिव्य,
प्रसून सारै र्महितं हि पार्श्वं ।
स्फूर्ज यशस्तार्जित हारहीरं,
नमामिवीरं गिरिसार धीरं ॥ ४ ॥
निःशेष लेखवररेख नरेषु कामं,
दानंददान महिमाद्भुत भाग्य धेय ।

श्रीपार्श्वदेव जयजन्म जरा पहेन.
नावावनाम सुरदानव मानवेन ॥ ५ ॥
निःसंग रंग गरिमादि गुण प्रधानि,
निर्भिन्न भ्रमतिमिराणि मनोज्ञदानि।
भक्ति प्रणम्र नर नायक नागलोक,
चूलाविलोलकमलावलिमालितानि॥६॥
कल्याण कारणतराणि गतापदानि,
संपत्पदानि दितदुर्गति मंफन्नानि।
निस्सीम नामभवभीति विभेदकानि
संपूरिताभिनत लोक समोहितानि॥७
वामेय गेयगुण मानविगान मुक्त,
पद्मावती धरणराज वर प्रयुक्त।
यज्जन्मसंयममुखानि शिवंकराणि,
कामं नमामि जिनराज पदानि तानि॥८
तापोच्छेदं दिशदनुदिनं प्राणिनां भा-
वुकानां, सिद्धंयस्यामृतरसमयं तुंग
कुंभात्प्रवृत्तं ॥ भात्यर्हस्ते सुवचन सरः

पाप पंकापहारि, बोधागाधं सुपदपदवी
निरपुरान्निरामं ॥ ९ ॥ रेवातातवद्विमल
सलिला नर्मदा शर्मदापि, कासीः कासी
कलुषहरिणी तुंगजद्रातिजद्रा ॥ तुंगा
गंगा जिनमतसरो नातमंतः पवित्रं,
जीवाहिंसा विरललहरी सगमागाह
देहं ॥ १० ॥ जोजोजव्या यदि शिव-
पुरे मोक्षलक्ष्मीबुभुक्षा, सिद्धांताब्धिं
समनुसरत प्रोल्लसन्न्यायचक्रं । निर्णि
क्तानः परम गरिमा गारमानंद हेतुं, चू-
लाचेलं गुरुगममणी संकुलं दूरपारं ॥ ११ ॥
मोहद्राह क्षितिरुहसमुन्मूलनेहस्ति ह-
स्त. प्रोच्छिंदनं परमतरजः पुंजमुच्छुत
शस्तं ॥ संसेव्यंश्री जिनजनगणैः का-
मदं संश्रितानां, सारंवीरा गमजलनिधिं
सादरं साधुसेवे ॥ १२ ॥ नक्तिप्रह्वावनम्रा

मरवर निकरै र्निजरै र्निर्मितायत्, पादाधस्ताद्विहारा वसर मवनिबु-ध्यप्रबुद्धस्यनेतुः॥ उत्तम स्वर्ण वर्णा नव नव कमल श्रेण्यनुश्रेण्यबाधा, आमुलालोलधूली बहुलपरिमला लोढ लोलालिमाला ॥ १३ ॥ नावोद्भुतप्रमोद प्रजुतविनतिनि भूरि नक्ति विधत्ते, यःपार्श्वेशक्रमाब्जे तव विपुल रमा प्राज्यराज्येन सार्धं । तस्य स्थैर्यं नजेत प्रगत चपलता संततं षट् पदाली, ऊंकारारावसारा मलदलकमला गार भूमीनिवासे ॥ १४ ॥ यस्मिन् गर्नावतीर्णे नगवति धनदः प्रत्नरत्नैः सुचेलैः, कल्याणैर्दिव्यवर्णै रनणु मणि गणै गंधवासैर्ववर्ष । शुश्रूषां कर्त्तुकाम स्त्रिदशवरगिरा सुंदरे मंदिरे वै, गाया

संभारसारे वरकमलकरे तारहाराभि-
रामे ॥ १५ ॥ पंकोत्पन्नंरजस्त्रि प्रव-
लतर जन्मा संग मुच्चै र्विहाया, ऽर्हद्वक्त्रा
ब्जे निवासं निरुपम परमे याऽव्यधात्त्वा
रतितत्वं । श्रेयो लक्ष्मी विलासे भगवति
वरदे चंद्रचंद्र प्रभाढ्ये, वाणीसंदोह
देहे भवविरहवरं देहिमे देवि सारं
॥ १६ ॥ इत्थंश्री पार्श्वदेवस्त्रिभूवन
विजयी जैन भद्रांघ्रि सेवः, श्रीसिद्धांत
प्रभोद्यद्विनयनतमुनिर्जैनचन्द्रो वि-
तन्द्रः । श्री मच्छ्रीमण्डपप्रा–गुदय
गिरिशिरो मण्डनं जीवराजी, राजीवो
ल्लास हेतुः प्रदिशतुकुशलं श्रेयसे श्री
विलासम् ॥१७॥

शुद्धि पत्रक.

अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति
कलशांकितम्	कलशांकितम्	१	४
झाहरम	झाहरमें	६	४
हागइ	होगइ	९	१४
मपधार	मे पधारे	१०	५
तोय	तीर्थ	१४	१२
मंदिरम	मंदिरमें	१५	९
तारापुरम	तारापुरमें	१९	२
पशुसागरम	पशुसागरमें	१९	१३
वधमान	वर्धमान	१२	१४
होगय	होगये	२७	११
संबके	सबके	२८	९
शहरा	शहरो	३१	९
पाश्व	पार्श्व	३४	१
मातयोंसे	मोतियोंसे	४२	५
राजाओंक	राजाओंका	४६	५
घठना	घटना	४६	६
आद्यभार	आभार	४९	१३
उसक	उसकी	५०	१२
श्रावकोम	श्रावकोंमेसे	५२	११
श्री–न्	श्रीमान्	५३	१५
लिखेह	लिखेहे	५४	४

श्री हंसविजयजी जैन फ्री लायब्रेरीमां मळतां पुस्तको.

पुस्तकनुं नाम.		कींमत.
१	नीतिदर्पण	०—४—०
२, ४, ७	प्राणोपोकार	भेट
३, ५	हंसविनोद	०-१२-०
६	स्नात्रपुजा	०—०—६
८	नवतत्वसंक्षिप्तसार	०—२—०
९	नर्मदासुंदरी कथा	भेट
१०	शीलवती कथा	भेट
११, १७	तिथि तप माणिक्यमाला	०—१—०
१२, १३	गहुंली संग्रह	०—३—०
१४	श्री नेमिनाथनी पूजा	०—४—०
१८	हीरप्रश्न	०—४—०
१९	अष्टापद पूजा	भेट
२०	शुकराज कथा	०—४—०
	धर्मविधि प्र०	छपाय छे.
	प्रश्नोत्तर पुष्पमाला	०-१४-०
	होरप्रश्नावळी	०—४—०
	देशाटन	०—४—०

लुणसावाडो मोटी पोळ-अमदावाद

श्री हंसविजयजी जैन फ्री लायब्रेरीमां मळतां पुस्तको.

पुस्तकनुं नाम.	कींमत.
१ श्री कावितीर्थ स्तवनादि संग्रह	भेट
२ श्री संवेगद्रुम कंदली	भेट
३ श्री गहुंली संग्रह	भेट
४ तत्वामृत भाषान्तर सहित	०-८-०
५ लाहोरमें श्री विजयसेनसूरिकी पधरामणी	०-१-०
६ सज्जन सदुपदेश	भेट
७ श्री समेतशिखरादि तीर्थयात्रा प्रवास	०-४-०
८ गिरनार मंडन श्री नेमिनाथजीकी अष्टोत्तर शतप्रकारी पूजा	०-८-०
९ लायब्रेरीनो प्रचार केवा प्रकारनो होवो जोइए.	भेट
१० श्री लोकतत्त्व निर्णय ग्रंथ भाषान्तर सहित	०-८-०

ठे. लहेरीपुरा, वडोदरा.